

## खण्ड-‘क’ : अपठित-अवबोधनम्

### अध्याय - 1 अपठितांश अवबोधनम्



#### स्मरणीय बिन्दु

1. सर्वप्रथम अपठित अनुच्छेद को दो-तीन बार अच्छी तरह पढ़ना चाहिए, क्योंकि अनुच्छेदों को पढ़ने से ही उनका अभिप्राय स्पष्ट होता है।
2. पढ़ने के पश्चात् अनुच्छेद के प्रश्नों का ज्ञान भी आवश्यक है। प्रश्नों के ज्ञान के पश्चात् ही उनके उत्तर लिखने चाहिए।
3. अनुच्छेद में दिए गए अव्ययों, विभक्तियों और प्रत्ययों को विशेष ध्यान से पढ़ें, क्योंकि इनका अर्थ पता न होने से उत्तर प्रायः अशुद्ध हो सकता है।

□□

## खण्ड-‘ख’ : रचनात्मक कार्यम्

### अध्याय - 1 पत्रम्, चित्रवर्णनम् व अनुच्छेद-लेखनम्



#### स्मरणीय बिन्दु

1. संस्कृत भाषा में पत्र रिक्त स्थानों के रूप में होते हैं, इसलिए सर्वप्रथम पत्र के विषय का स्पष्टीकरण आवश्यक है। पत्र किसके लिए लिखा जा रहा है, इसका ज्ञान भी आवश्यक है।
2. विषय के स्पष्टीकरण के लिए पत्र को बार-बार पढ़ना अनिवार्य है।
3. मञ्जूषा में दिए हुए शब्दों का भी अर्थ करना चाहिए, उसके पश्चात् दिए गए शब्दों से रिक्त स्थानों की पूर्ति करनी चाहिए।
4. रिक्त स्थानों की पूर्ति के पश्चात् भी पत्र को पढ़ना अनिवार्य है।

□□

## खण्ड-‘ग’ : अनुप्रयुक्त-व्याकरणम्

### अध्याय - 1 वाक्येषु अनुच्छेदे वा सन्धिकार्यम्



#### स्मरणीय बिन्दु

अत्यन्त समीपवर्ती दो या दो से अधिक वर्णों के मेल से किसी नियम के अन्तर्गत होने वाले परिवर्तन को सन्धि कहते हैं।

सन्धि के प्रकार

स्वर सन्धि: व्यञ्जन सन्धि: विसर्ग सन्धि:

(रमा + ईशः = रमेशः) (उत् + चारणम् = उच्चारणम्) (निः + चलम् = निश्चलम्)

यहाँ केवल उन्हीं सन्धियों का विवेचन किया जा रहा है, जो पाठ्यक्रम में निर्धारित हैं—

## (अ) स्वर सन्धि:

1. दीर्घ सन्धि : पूर्वपद के अन्त में ह्रस्व स्वर या दीर्घ स्वर में से कोई एक हो और उत्तरपद के शुरू में भी समान ह्रस्व स्वर या दीर्घ स्वर हो तो दोनों को मिलाकर दीर्घ हो जाता है। यथा—

अ	+	अ	=	आ	—	धन	+	अर्थी	=	धनार्थी
अ	+	आ	=	आ	—	हिम	+	आलयः	=	हिमालयः
आ	+	अ	=	आ	—	विद्या	+	अर्थी	=	विद्यार्थी
आ	+	आ	=	आ	—	विद्या	+	आलयः	=	विद्यालयः
इ	+	इ	=	ई	—	मुनि	+	इन्द्रः	=	मुनीन्द्रः
इ	+	ई	=	ई	—	मुनि	+	ईशः	=	मुनीशः
ई	+	इ	=	ई	—	मही	+	इन्द्रः	=	महीन्द्रः
ई	+	ई	=	ई	—	नदी	+	ईशः	=	नदीशः
उ	+	उ	=	ऊ	—	लघु	+	उत्सवः	=	लघूत्सवः
उ	+	ऊ	=	ऊ	—	लघु	+	ऊर्मि	=	लघूर्मिः
ऊ	+	उ	=	ऊ	—	वधू	+	उत्सवः	=	वधूत्सवः
ऊ	+	ऊ	=	ऊ	—	वधू	+	ऊर्मिः	=	वधूर्मिः
ऋ	+	ऋ	=	ऋ	—	पितृ	+	ऋणम्	=	पितृणम्

2. गुण सन्धि: पूर्वपद के अन्त में अ या आ में से कोई एक वर्ण तथा उत्तरपद के शुरू में इ/ई होने पर 'ए' और उ/ऊ होने पर 'ओ' तथा ऋ/ॠ होने पर 'अर्' हो जाता है। यथा—

अ/आ	+	इ/ई	=	ए	—	रमा	+	इन्द्रः	=	रमेन्द्रः
						महा	+	ईशः	=	महेशः
अ/आ	+	उ/ऊ	=	ओ	—	महा	+	उदयः	=	महोदयः
						महा	+	ऊर्मिः	=	महोर्मिः
अ/आ	+	ऋ/ॠ	=	अर्	—	महा	+	ऋषिः	=	महर्षिः

3. वृद्धि सन्धि: पूर्वपद के अन्त में अ अथवा आ तथा उत्तरपद के शुरू में ए/ऐ होने पर 'ऐ' तथा ओ/औ होने पर 'औ' हो जाता है। यथा—

अ	+	ए	=	ऐ	—	अद्य	+	एव	=	अद्यैव
आ	+	ए	=	ऐ	—	बाला	+	एका	=	बालैका
अ	+	ऐ	=	ऐ	—	मत	+	एक्यम्	=	मतैक्यम्
आ	+	ऐ	=	ऐ	—	कृष्णा	+	ऐक्यम्	=	कृष्णैक्यम्
अ	+	ओ	=	औ	—	जल	+	ओषः	=	जलौषः
आ	+	ओ	=	औ	—	विद्या	+	ओजः	=	विद्यौजः
अ	+	औ	=	औ	—	रूप	+	औदार्यम्	=	रूपौदार्यम्
आ	+	औ	=	औ	—	विद्या	+	औत्सुक्यम्	=	विद्यौत्सुक्यम्

4. यण् सन्धि: पूर्वपद के अन्त में इ/ई हो तथा उत्तरपद के शुरू में असमान स्वर हो तो इ/ई का 'य्' हो जाता है। यथा—

इ/ई	+	असमान स्वर	=	य्	—	यदि	+	अपि	=	यद्यपि
						इति	+	एव	=	इत्येव

पूर्वपद के अन्त में उ/ऊ हो तो तथा उत्तरपद के शुरू में असमान स्वर हो तो उ/ऊ का 'व्' हो जाता है। यथा—

उ/ऊ	+	असमान स्वर	=	व्	—	अनु	+	अयः	=	अन्वयः
-----	---	------------	---	----	---	-----	---	-----	---	--------

पूर्वपद के अन्त में ऋ/ॠ हो तथा उत्तरपद के शुरु में असमान स्वर हो तो ऋ का 'र्' हो जाता है। यथा—

ऋ/ॠ + असमान स्वर = र् - पितृ + आज्ञा = पित्राज्ञा

पूर्वपद के अन्त में लृ हो और उत्तरपद के शुरु में असमान स्वर हो तो लृ का 'ल्' हो जाता है। यथा—

लृ + असमान स्वर = लृ - ल् + अकारः = लकारः

### 5. अयादि सन्धि:—(एचोऽयवायावः)

यदि ए, ओ, ऐ, औ के बाद कोई भी (समान या असमान) स्वर आये तो क्रमशः 'ए' का 'अय्', 'ओ' का 'अव्', 'ऐ' का 'आय्', 'औ' का 'आव्' हो जाता है। उदाहरणानि—

#### अयादि सन्धि बोधक चत्म्

पूर्ववर्णः	परवर्णः	परिवर्तनम्	
ए +	स्वरः	ए स्थाने अय्	ए → अय् + स्वरः
ऐ +	स्वरः	ऐ स्थाने आय्	ऐ → आय् + स्वरः
ओ +	स्वरः	ओ स्थाने अव्	ओ → अव् + स्वरः
औ +	स्वरः	औ स्थाने आव्	औ → आव् + स्वरः

उदाहरणानि—

#### 1. ए + स्वरः = अय् स्वरः

यथा—ने, अनम् = न् + ए + अनम्  
= न् + अय् + अनम् = नयनम्  
एवमेव—शे, अनम् = श् + ए + अनम्  
= श् + अय् + अनम् = शयनम्

#### 2. ऐ + स्वरः = आय् स्वरः

यथा—नै, अकः = न् + ऐ + अकः  
= न् + आय् अकः = नायकः  
एवमेव—गै, अकः = ग् + ऐ, अकः  
= ग् + आय् अकः = गायकः

#### 3. आ + स्वरः = अव् स्वरः

यथा—भो, अनम् = भ् + ओ + अनम्  
= भ् + अव् + अनम् = भवनम्

#### 4. औ + स्वरः = आव् स्वरः

यथा—पौ + अकः = प् + औ + अकः  
= प् + आव् + अकः = पावकः

□□

## अध्याय - 2 शब्दरूपाणि



### स्मरणीय बिन्दु

1. वाक्येषु शब्दरूपाणां प्रयोगाः (वाक्यों में शब्द रूपों के प्रयोग)
2. अकारान्त अर्थात् जिन शब्दों के अन्त में 'अ' वर्ण हो, जैसे—बालक, राम आदि।
3. इकारान्त अर्थात् जिन शब्दों के अन्त में 'इ' वर्ण हो, जैसे—कवि, रवि आदि।
4. उकारान्त अर्थात् जिन शब्दों के अन्त में 'उ' वर्ण हो, जैसे—साधु आदि।
5. ऋकारान्त अर्थात् जिन शब्दों का अन्त 'ऋ' वर्ण से होता हो, जैसे—पितृ आदि।
6. इसी प्रकार आकारान्त, ईकारान्त अर्थात् आ/ई से समाप्त होने वाले शब्द अर्थात् रमा, नदी आदि।

पाठ्यक्रम में— अकारान्त (बालकवत्)

उकारान्त पुल्लिङ्ग—साधुवत्

आकयन्त स्त्रीलिङ्ग शब्दाः—लतावत्

ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग शब्दाः—नदीवत्

सर्वनाम शब्दाः—अस्मद् युष्मद् किम् (त्रिषुलिङ्गेषु)

□□

## अध्याय – 3 धातुरूपाणि



### स्मरणीय बिन्दु

1. वाक्येषु धातु रूपाणां प्रयोगाः (वाक्यों में धातु रूपों के प्रयोग)
  2. क्रिया का मूलरूप धातु कहलाता है।
  3. लट्लकार को वर्तमान काल, लृट्लकार को भविष्यत् काल तथा लङ्लकार को भूत काल कहते हैं।
  4. परस्मैपदी में अति, अतः, अन्ति तथा आत्मनेपदी में अते, एते, अन्ते प्रत्यय जुड़ते हैं; जैसे—  
पठ् + अति = पठति, पठ् + अतः = पठतः, पठ् + अन्ति = पठन्ति (परस्मैपदी)  
सेव् + अते = सेवते, सेव् + एते = सेवेते, सेव् + अन्ते = सेवन्ते (आत्मनेपदी)
- टिप्पणी—दोनों ही लट्लकार वर्तमान काल के रूप हैं।
- पाठ्यक्रम में—पठ, अस्, कृ, पा (पिब) सेव (पञ्चसु लकरेषु)

□□

## अध्याय – 4 कारक उपपद विभक्तीनां प्रयोगाः



### स्मरणीय बिन्दु

**उपपद विभक्ति**—जब वाक्य में किसी विशेष शब्द के कारण कारक चिह्नों के अनुसार विभक्ति न लगकर कोई विशेष विभक्ति लग जाए, तो उसे उपपद विभक्ति कहते हैं। यथा—

#### द्वितीया विभक्तिः

अभितः	—	ग्रामम् अभितः वृक्षाः सन्ति।	परितः	—	विद्यालयम् परितः राजपथम् वर्तते।
उभयतः	—	नगरम् उभयतः नदी वहति।	परितः	—	ग्रामम् समया नदी प्रवहति।
निकषा	—	निकषा/समया।	प्रतिविना	—	दीनं प्रति दयां कुरु।

#### तृतीया विभक्तिः

सह/साकं/समं/सार्धम्	—	सीता रामेण सह वनम् अगच्छत्।	अलम्	—	अलम् कोलाहलेन।
			विन्य	—	परिश्रमेण विना सफलतां न प्रप्नोति।

#### चतुर्थी विभक्तिः

नमः	—	नीलकण्ठाय नमः।	स्वाहा	—	दुर्गायै स्वाहा।
दा	—	राजा ब्राह्मणेभ्यः वस्त्रं ददाति।	रूच्	—	मह्यम् मोदकं रोचते।
कुप	—	पिता वालकम् कुप्यति।			

#### पञ्चमी विभक्तिः

बहिः	—	विद्यालयात् बहिः देवालयः अस्ति।	विना	—	मत् (मद्) विना कथं गमिष्यसि ?
भी	—	मृगः सिंहात् बिभेति।	रक्ष	—	अयं चौरात् रक्षति।

## षष्ठी विभक्ति:

पुरतः	—	गुरोः पुरतः छात्राः गच्छन्ति।	पृष्ठतः	—	वाहनस्य पृष्ठतः सः अगच्छत्।
अधः	—	काष्ठफलस्य अधः क्रीडनम् वर्तते।	तरप्-तमप्	—	कालिदासः संस्कृतभाषायाः श्रेष्ठतरः कवि अस्ति।
उपरि	—	वानरः वृक्षस्योपरि तिष्ठति।			

## सप्तमी विभक्ति:

कुशलः	—	सः पठने कुशलः अस्ति।	निपुणः	—	रामः अध्यापने निपुणः वर्तते।
प्रवीणः	—	अतुलः वाहनचालने प्रवीणः अस्ति।	स्निह्	—	पिता सुतायाम् स्निह्यति।
विश्वस्	—	माता पुत्रं विश्वसिति।			

□□

## अध्याय - 5 प्रत्ययाः



## स्मरणीय बिन्दु

**प्रत्यय**—वे शब्द या शब्दांश जिनका अपना कोई स्वतन्त्र अर्थ नहीं होता है, लेकिन किसी भी शब्द या धातु के पीछे जुड़कर उसके अर्थ को बदल देते हैं, प्रत्यय कहलाते हैं। कृदन्त प्रत्यय धातुओं के साथ जोड़े जाते हैं। यहाँ पाठ्यक्रम में निर्धारित प्रत्ययों का वर्णन किया जा रहा है।

- क्त्वा** (करके) का 'त्वा' शेष बचता है। क्त्वा प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होता है। यथा—  
 पठ् + क्त्वा = पठित्वा                      गम् + क्त्वा = गत्वा  
 चल् + क्त्वा = चलिता                      भू + क्त्वा = भूत्वा  
 नम् + क्त्वा = नत्वा                      हस् + क्त्वा =
- तुमुन्** (के लिए) — 'तुमुन्' का 'तुम्' शेष बचता है। तुमुन् प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होता है। यथा—  
 पठ् + तुमुन् = पठितुम्                      गम् + तुमुन् = गन्तुम्  
 चल् + तुमुन् = चलितुम्                      भू + तुमुन् = भवितुम्  
 नम् + तुमुन् = नन्तुम्                      हस् + तुमुन् = हसितुम्
- ल्यप्** (करके) जहाँ धातु से पहले उपसर्ग हो, वहाँ क्त्वा के स्थान पर 'ल्यप्' प्रत्यय का प्रयोग होता है। 'ल्यप्' का 'य' शेष बचता है। ल्यप् प्रत्ययान्त शब्द अव्यय होता है। यथा—  
 सम् + पठ् + ल्यप् = संपठ्य                      आ + गम् + ल्यप् = आगत्य/आगम्य  
 वि + भ्रम् + ल्यप् = विभ्रम्य                      सम् + भू + ल्यप् = संभूय  
 प्र + नम् + ल्यप् = प्रणम्य                      वि + हस् + ल्यप् = विहस्य
- क्त-क्तवतु प्रत्यय**—क्त प्रत्यय कर्मवाच्य तथा भाववाच्य में भूतकाल में प्रयुक्त होता है।  
 कर्तृवाच्य में भूतकाल में 'क्तवतु' का प्रयोग होता है यथा—  
 चल् + क्तवतु = चलितवान्  
 दृश् + क्तवतु = दृष्टवान्  
 लिख् + क्तवतु = लिखितवान्  
 कृ + क्तवतु = कृतवान्  
 स्ना + क्तवतु = स्नातवान्

6]

ओसवाल सी.बी.एस.ई. अध्याय त्वरित समीक्षा, संस्कृत-IX

5. शतृ प्रत्यय—शतृ प्रत्ययः केवल परस्मैपदी-धातुओं के साथ ही प्रयोग होता है यथा—

क्रीड् + शतृ = क्रीडत् (पुं. → क्रीडन्, स्त्री → क्रीडन्ती, नपुं-क्रीडत्)

चल् + शतृ = चलत्, (पुं. → चलन्, स्त्री. चलन्ती, नपुं-चलत्)

रच् + शतृ = रचयत् (पुं. → रचयन्, स्त्री. रचयन्ती, नपुं-रचयत्)

पूज्-शतृ = पूजयत् (पुं. → पूजयन्, स्त्री. पूजयन्ती, नपुं-पूजयत्)

6. शानच्-प्रत्ययः—शानच् प्रत्यय शतृ के समान होता है यह आत्मनेपदी धातु के साथ आन या मान जुड़ने से बनता है। यथा—

कम्प् + शानच् = कम्पमान (पुं.—कम्पमानः, स्त्री—कम्प-मान, नपुं.—कम्पमानम्)

लभ् + शानच् = लभमान (पुं.—लभमान; स्त्री—लभमाना, नपुं.—लभमान्)

सेव + शानच् = सेवमान (पुं.—सेवमानः, स्त्री—सेवमाना, नपुं—सेवमानम्)

□□

## अध्याय - 6 संख्या



### स्मरणीय बिन्दु

संख्या वाचक शब्द विशेषण भी होते हैं और विशेष्य भी। एक से अष्टादशन् तक संख्याएँ विशेषण ही होती हैं। नवदश से पराद्ध तक संख्याएँ कहीं विशेषण तो कहीं विशेष्य होती हैं। ये संख्यावाचक शब्द दो प्रकार के होते हैं—

1. गणनावाचक—गणनावाचक संख्या शब्दों से साधारणतया किसी वस्तु की संख्या का ज्ञान होता है; जैसे—एक, द्वि, त्रि, चतुर, पञ्च इत्यादि।
2. क्रमवाचक—क्रमवाचक संख्यावाची शब्दों से क्रम का बोध होता है। प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, इत्यादि।
  - (i) एक शब्द एकवचनान्त, द्वि शब्द द्विवचनान्त, त्रि से अष्टादशन् तक बहुवचनान्त होते हैं।
  - (ii) एक, द्वि, त्रि, चतुर शब्दों का लिंग अपने विशेष्य के अनुसार होता है और इस विशेष्य के अनुसार ही उनमें परिवर्तन होता है।

#### संख्येयवाचकेषु रूपभेदः

	पुल्लिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग
उदा.	एकः बालकः	एका बालिका	एकं पुस्तकम्
	द्वौ बालकौ	द्वे बालिके	द्वे पुस्तके
	त्रयः बालकाः	तिस्रः बालिकाः	त्रीणि पुस्तकानि
	चत्वारः बालकाः	चतस्रः बालिकाः	चत्वारि पुस्तकानि

3. पञ्चन् से अष्टादशन् के रूप पञ्चन् के ही समान होते हैं। इनके रूप तीनों लिङ्गों में एक जैसे रहते हैं।

#### संख्येयवाचकेषु समानं रूपम्

	पुल्लिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग
उदा.	पञ्च बालकाः	पञ्च बालिकाः	पञ्च पुस्तकानि
	षट् बालकाः	षट् बालिकाः	षट् पुस्तकानि
	सप्त बालकाः	सप्त बालिकाः	सप्त पुस्तकानि
	अष्ट बालकाः	अष्ट बालिकाः	अष्ट पुस्तकानि
	नव बालकाः	नव बालिकाः	नव पुस्तकानि
	दश बालकाः	दश बालिकाः	दश पुस्तकानि

## संख्यावाचकः शब्दः

अंक	संख्यावाचकाः शब्दाः	अंक	संख्यावाचकाः शब्दाः	अंक	संख्यावाचकाः शब्दाः
1	एक (एकः, एका, एकम्)	2	द्वि (द्वौ, द्वे, द्वै)	3	त्रि (त्रयः, तिस्रः, त्रीणि)
4	चतुर् (चत्वारः, चतस्रः, चत्वारि)	5	पञ्च (पञ्च)	6	षट् (षड्)
7	सप्त (सप्त)	8	अष्ट (अष्ट, अष्टौ)	9	नव (नव)
10	दश (दश)	11	एकादश	12	द्वादश
13	त्रयोदश	14	चतुर्दश	15	पञ्चदश
16	षोडश	17	सप्तदश	18	अष्टादश
19	नवदश/एकोनविंशतिः	20	विंशतिः	21	एकविंशतिः
22	द्वाविंशतिः	23	त्रयोविंशतिः	24	चतुर्विंशतिः
25	पञ्चविंशतिः	26	षड्विंशतिः	27	सप्तविंशतिः
28	अष्टाविंशतिः	29	नवविंशतिः/एकोनत्रिंशत्	30	त्रिंशत्
31	एकत्रिंशत्	32	द्वात्रिंशत्/द्वित्रिंशत्	33	त्रयस्त्रिंशत्
34	चतुस्त्रिंशत्	35	पञ्चत्रिंशत्	36	षट्-त्रिंशत्
37	सप्तत्रिंशत्	38	अष्टात्रिंशत्	39	नवत्रिंशत्/एकोनचत्वारिंशत्
40	चत्वारिंशत्	41	एकचत्वारिंशत्	42	द्विचत्वारिंशत्
43	त्रिचत्वारिंशत्	44	चतुश्चत्वारिंशत्	45	पञ्चचत्वारिंशत्
46	षट्चत्वारिंशत्	47	सप्तचत्वारिंशत्	48	अष्टाचत्वारिंशत्
49	नवचत्वारिंशत्/एकोनपञ्चाशत्	50	पञ्चाशत्	51	एकपञ्चाशत्
52	द्विपञ्चाशत्	53	त्रिपञ्चाशत्	54	चतुःपञ्चाशत्
55	पञ्चपञ्चाशत्	56	षट्पञ्चाशत्	57	सप्तपञ्चाशत्
58	अष्टपञ्चाशत्	59	नवपञ्चाशत्	60	षष्टिः
61	एकषष्टिः	62	द्विषष्टिः	63	त्रिषष्टिः
64	चतुःषष्टिः	65	पञ्चषष्टिः	66	षट्षष्टिः
67	सप्तषष्टिः	68	अष्टषष्टिः	69	नवसप्ततिः
70	अशीति,	71	एक सप्ततिः	72	द्विसप्ततिः
73	त्रिसप्तति	74	चतुः सप्ततिः	75	पञ्चसप्ततिः
76	षट्सप्ततिः	77	सप्तसप्तति	78	अष्टसप्ततिः
79	नवसप्ततिः	80	अशीतिः	81	एकाशीतिः
82	द्व्यशीतिः	83	त्र्यशीतिः	84	चतुरशीतिः
85	पञ्चाशीतिः	86	षष्ठ्यशीतिः	87	सप्ताशीतिः
88	अष्टाशीतिः	89	नवाशीतिः	90	नवतिः
91	एकनवतिः	92	द्विनवतिः	93	त्रिनवतिः
94	चतुर्नवतिः	95	पञ्चनवतिः	96	षण्णवतिः
97	सप्तनवतिः	98	अष्टनवतिः	99	नवनवतिः
100	शतम्	101	षष्टिः	102	सप्ततिः
103	अशीतिः	104	नवतिः	105	शतम्
106	सहस्रम्				

## संख्यावाचक शब्दों के रूप

एक (सदा एकवचन में) (One)

विभक्ति:	पुल्लिङ्गम्	स्त्रीलिङ्गम्	नपुंसकलिङ्गम्
प्रथमा	एकः	एका	एकम्
द्वितीया	एकम्	एकाम्	एकम्
तृतीया	एकेन	एकया	एकेन
चतुर्थी	एकस्मै	एकस्यै	एकस्मै
पञ्चमी	एकस्मात्	एकस्याः	एकस्मात्
षष्ठी	एकस्य	एकस्याः	एकस्य
सप्तमी	एकस्मिन्	एकस्याम्	एकस्मिन्

द्वि = दो (सदा द्विवचन में) (Two)

विभक्ति:	पुल्लिङ्गम्	स्त्रीलिङ्गम्	नपुंसकलिङ्गम्
प्रथमा	द्वौ	द्वे	द्वे
द्वितीया	द्वौ	द्वे	द्वे
तृतीया	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
चतुर्थी	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
पञ्चमी	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्	द्वाभ्याम्
षष्ठी	द्वयोः	द्वयोः	द्वयोः
सप्तमी	द्वयोः	द्वयोः	द्वयोः

त्रि = तीन (सदा, बहुवचन में) (Three)

विभक्ति:	पुल्लिङ्गम्	स्त्रीलिङ्गम्	नपुंसकलिङ्गम्
प्रथमा	त्रयः	तिस्रः	त्रीणि
द्वितीया	त्रीन्	तिस्रः	त्रीणि
तृतीया	त्रिभिः	तिसृभिः	त्रिभिः
चतुर्थी	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः	त्रिभ्यः
पञ्चमी	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः	त्रिभ्यः
षष्ठी	त्रयाणाम्	तिसृणाम्	त्रयाणाम्
सप्तमी	त्रिषु	तिसृषु	त्रिषु

चतुर् = चार (सदा बहुवचन में) (Four)

विभक्ति:	पुल्लिङ्गम्	स्त्रीलिङ्गम्	नपुंसकलिङ्गम्
प्रथमा	चत्वारः	चतस्रः	चत्वारि
द्वितीया	चतुरः	चतस्रः	चत्वारि
तृतीया	चतुर्भिः	चतसृभिः	चतुर्भिः
चतुर्थी	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः	चतुर्भ्यः
पञ्चमी	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः	चतुर्भ्यः
षष्ठी	चतुर्णाम्	चतसृणाम्	चतुर्णाम्
सप्तमी	चतुर्षु	चतसृषु	चतुर्षु



पञ्चन्, षट्, सप्तन्, अष्टन्, आदि सभी लिंगों में समान होते हैं।

विभक्ति:	पञ्चन्	षट्	सप्तन्
प्रथमा	पञ्च	षट्, षड्	सप्त
द्वितीया	पञ्च	षट्, षड्	सप्त
तृतीया	पञ्चभिः	षड्भिः	सप्तभिः
चतुर्थी	पञ्चभ्यः	षड्भ्यः	सप्तभ्यः
पञ्चमी	पञ्चभ्यः	षड्भ्यः	सप्तभ्यः
षष्ठी	पञ्चानाम्	षण्णाम्	सप्तानाम्
सप्तमी	पञ्चसु	षट्सु	सप्तसु

विभक्ति:	अष्टन्	नवन्	दशन्
प्रथमा	अष्टा, अष्ट	नव	दश
द्वितीया	अष्टा, अष्ट	नव	दश
तृतीया	अष्टाभिः, अष्टभिः	नवभिः	दशभिः
चतुर्थी	अष्टाभ्यः, अष्टभ्यः	नवभ्यः	दशभ्यः
पञ्चमी	अष्टाभ्यः, अष्टभ्यः	नवभ्यः	दशभ्यः
षष्ठी	अष्टानाम्	नवानाम्	दशानाम्
सप्तमी	अष्टासु, अष्टसु	नवसु	दशसु

□□

## अध्याय - 7 उपसर्गः



### स्मरणीय बिन्दु

जो किसी शब्द के आदि में आकर उसके अर्थ में विशेषता उत्पन्न कर देते हैं या सर्वथा ही उसके अर्थ को बदल देते हैं, वे उपसर्ग कहे जाते हैं। उपसर्ग अव्यय होते हैं।

जैसे 'हार' से पहले 'प्र' आ, सम्, वि, परि, उपसर्ग लगाने से क्रमशः 'प्रहार, आहार, संहार, विहार, परिहार' शब्द बनते हैं।

**उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते।**

**प्रहाराहार संहार विहार परिहारवत्।।**

उपसर्ग के द्वारा धातु का अर्थ बलपूर्वक अन्यत्र ले जाया जाता है अर्थात् बदल दिया जाता है। जैसे-प्रहार, आहार, संहार, विहार और परिहार (के समान)।

संस्कृत भाषा में उपसर्गों की संख्या 22 होती है—प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, वि, आड् (आ), नि, अधि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि, उप्, परि, उप्, अपि, दृत्। पाठ्यक्रम में—आ, वि, प्रति, उप, अनु, निर्, प्र, अधि, अप, नि, अव हैं।

**उपसर्ग अर्थ**

प्र अधिक, प्रकर्ष  
परा निषेध, विरोध  
अप हीनता, न्यूनता, बुरा

**उदाहरण**

प्रलयः, प्रचारः, प्रसारः, प्रवालम्, प्रहारः, प्रमाणं, प्रख्यातं।  
पराजयं, पराक्रमं, पराभवं, परामर्शम्, पराकाष्ठां।  
अपकारः, अपवारः, अपहरणम्, अपकर्षः, अपमानः, अपयशः, अपशब्दः,  
अपशकुनम्।

सम्	अच्छा	सम्मेलनः, संग्रहः, सम्यक्, सम्पन्नः, संस्कार, संसर्गः, संकल्पः।
अनु	पीछे, कम, समानता	अनुभवं, अनुशासनम्, अनुपमम्, अनुचरः, अनुकरणम्।
अव	हीनता, निम्नता	अवलोकनं, अवगुणः, अवनतिः, अवज्ञा, अवसान।
निस्	निषेध, रहित, बाहर	निष्फलं, निष्कासनं, निष्प्रभं।
निर्	नि (नि) बाहर, निषेध रहित	निश्चल, निःशंकः, निरपराधः, निर्भयं, निर्दोषः।
दुस्	दु (दु) कठिन, बुरा दुष्ट, हीन	दुस्तरः, दुर्लभः, दुर्जनः, दुष्कर्मः, दुश्शासनम्, दुराचारः, दुस्सहः, दुर्गुणः।
वि	विशिष्टता रहित	विज्ञानम्, विदेशः, विवादः, विशेषः।
	विभिन्नता	विशारदः, विनयः, विभागः, विरागः, विमनाः, विधवा, वियोगः, विनाशः।
आङ्	(आ) पर्यन्त	आजन्मः, आरम्भः, आरोहणं, आसमुद्रं, आकण्ठम्, आचरणम्, आगमनम्।
नि	निषेध, भीतर, नीचे, अतिरिक्त	निवारणम्, निदानम्, निरोधः, निपातः, नियुक्तः, निबन्धः, नियोगः।
अधि	सामीप्य, अधिकार, ऊपर	अध्यक्षः अधिराजः, अधिकतमः, अधिपतिः, अध्यात्मः।
अति	अधिक	अतिक्रमणं, अतिनिर्धनः, अत्यन्तम्, अतिबलं, अतिरिक्तम्।
सु	अच्छा	सुकर्म, सुकृतं, सुभगं, सुकविः, सुदरं।
उत्	ऊपर, ऊँचा	उत्तमः उत्पत्तिः, उत्कर्षः, उन्नतिः।
अभि	इच्छा प्रकट करना, चारों ओर, सामने	अभिज्ञानम्, अभियोगः, अभिशापम्, अभिनवं, अभियानम्।
प्रति	विरुद्ध, साने, हर एक	प्रतिध्वनिः, प्रतिकूलम्, प्रत्येक, प्रतिवादी, प्रत्यक्षम्, प्रतिनिधिः, प्रतिमान प्रतिदिनम्, प्रतिपक्षम्।
परि	आसपास, चारों ओर	परिचयः, परितुष्टः, परितापः, परिजनः, परित्याग, परिधिः।
उप	समीप, अमुख्य, छोटा	उपगंगम्, उपदेशः, उपभेदः, उपनाम, उपमन्त्री, उपवन, उपाचार्यः, उपासना।
दुर्	कु, बुरे अर्थ में, कठिन	दुर्भावं, दुर्व्यवहारः, दुर्गतिम्, दुराचारं।

कुछ शब्द एक से अधिक उपसर्गों के योग से भी बनते हैं। जैसे—

व्यवहारः = वि + अव + हारः।

समन्वय = सम + अनु + अयः।

दुर्व्यवहारः = दुर् + वि + अव + हारः।

कुछ अव्ययों तथा विशेषणों का भी प्रयोग उपसर्गों की भाँति होता है। जैसे—

शब्द                      अर्थ                      उदाहरण

अन्तः                      अन्दर                      अन्तरःपुरम्।

सत्                      अच्छा                      सज्जनः।

कु                      बुरा                      कुमार्गः।

**विशेष—1.** कुछ उपसर्गों का प्रयोग भी स्वतन्त्र रीति से किसी धातु तथा शब्द से अलग होता है। जैसे—जपम् अनु प्रावर्षत् (जप के बाद वर्षा हुई।)

**2.** ये उपसर्ग अव्यय के ही अन्तर्गत आते हैं।

### उपसर्गों का प्रयोग

उपसर्गों का प्रयोग धातुओं से पहले ही होता है। इनके कारण धातु का सामान्य अर्थ विशेष हो जाता है, बदल जाता है तथा चमक जाता है। कहीं इनके प्रयोग से धातु बलशालिनी बन जाती है।

उपसर्गयुक्त धातुएँ—छात्रों के ज्ञान के लिए सोपसर्ग धातुएँ दी जाती हैं। अनुवाद करते समय इन क्रियाओं का अच्छा उपयोग हो सकता है।

**भू = होना**

भवति = होता है।  
अभि भवति = दबाता है,  
तिरस्कार करता है।  
पराभवति = पराभव करता है।  
परिभवति = तिरस्कार करता है।  
प्रभवति = पैदा होता है। प्रकट होता है।  
उद्भवति = उत्पन्न होता है।  
प्रादुर्भवति = उत्पन्न होता है।  
तिरोभवति = छिपाता है।  
आविर्भवति = प्रकट होता है।

**वद् (बोलना)**

वदति = बोलता है।  
अपवदति = गाली देती है।  
अनुवदति = अनुवाद करता है।  
उपवदति = प्रार्थना करता है।  
विप्रवदते = विरुद्ध बोलता है।  
प्रतिवदति = जबाब देता है।  
संवदति = बातचीत करता है।  
सप्रवदते = मिलकर बोलता है।

**गम् = जाना**

गच्छति = जाता है।  
आगच्छति = आता है।  
निर्गच्छति = बाहर जाता है।  
अधिगच्छति = निकलता है, ऊपर चढ़ता है।  
प्रतिगच्छति = लौटता है।  
अपगच्छति = दूर हटता है। नीचे जाता है।

**स्था = ठहरना, रुकना**

प्रतिष्ठते = प्रस्थान करता है  
(आत्मनेपद्)  
अप्रतिष्ठते = उत्थान करता है।  
तिष्ठति = ठहरता है, बैठता है।  
उत्तिष्ठति = उठता है।  
संतिष्ठते = मरता है।  
(आत्मनेपद्)

**नी = (ले जाना)**

नयति = ले जाता है।  
विनयति = विनय करता है। झुकता है।

विनयति = गिनता है या खर्च करता है।

अनुयति = मानता है।

अभिनयति = अभिनय करता है।

परिणयति = विवाह करता है।

निर्णयति = निर्णय करता है।

उपनयति = पास लाता है, पास ले जाता है।

उपानयति = भेंट देता है।

अपनयति = दूर करता है, हटाता है।

आनयति = लाता है।

उन्नयति = उन्नति करता है, उठता है।

प्रणयति = प्रेम करता है।

**हृ (हर) = ले जाना अथवा चुराना**

हरति = ले जाता है।

विहरति = विहार करता है।

अपहरति = चुराता है।

अनुहरति = नकल करता है।

परिहरति = छोड़ता है।

उदाहरति = उदाहरण देता है।

प्रहरति = प्रहार करता है, मारता है।

संहरति = संहार करता है।

उपाहरति = लाता है।

समाहरति = इकट्ठा करता है।

आहरति = खाता है, लाता है।

व्याहरति = बोलता है।

व्यावहरति = व्यवहार करता है।

उद्धरति = उद्धार करता है।

प्रत्युदाहरति = दूसरा उदाहरण देता है।

**कृ = करना**

उपकरोति = उपकार करता है।

अधिकरोति = अधिकार करता है।

व्याकरोति = व्याख्या करता है।

विकरोति = दूषित करता है।

अपकरोति = अपकार करता है।

अनुकरोति = नकल करता है।

विकुर्वते = उच्चारण करता है।

तिरस्करोति = तिरस्कार करता है।

संस्करोति = संस्कार करता है।

अपाकरोति = खण्डन करता है, कम करता है।

प्रत्युपकरोति = प्रत्युपकार करता है।  
 प्रकुरुते = जबरदस्ती करता है, धर्मार्थ लगाता है।  
 उत्कुरुते = चुगली करता है। धमकाता है।  
 सुकरोति = पुण्य करता है।

#### सृ = सरकना (चलना)

सरति = सरकता है, जाता है।  
 अनुसरति = अनुसरण करता है।  
 प्रसरति = फैलता है।  
 अवसरति = निकलता है।  
 अपसरति = पीछे हटता है।  
 प्रसारयति = फैलाता है।  
 निस्सरति = निकालता है।  
 निस्सारयति = निकालता है।

#### ईक्ष् = देखना

ईक्षते = देखता है।  
 अपेक्षते = इच्छा करता है।  
 उपेक्षते = लापरवाही करता है।  
 वीक्षते = देखता है।  
 प्रतीक्षते = प्रतीक्षा करता है।  
 समीक्षते = समीक्षा करता है।  
 अन्वीक्षते = चिन्ता करता है या मनन करता है।

#### अय् = जाना

अयते = जाता है।  
 पलायते = भागता है।  
 व्ययते = खर्च करता है।  
 निरयते = निकलता है।  
 दुरयते = दुखी होता है।  
 दुलयते = दुखी होता है।  
 विलयते = विलीन होता है।

#### क्षिप् = फेंकना

क्षिपति = फेंकता है।  
 आक्षिपति = दोष लगाता है।  
 उत्क्षिपति = ऊपर फेंकता है।  
 विक्षिपति = विक्षिप्त होता है।  
 निक्षिपति = नीचे फेंकता है।

#### अस् = फेंकना

अस्यति = फेंकता है।  
 अपास्यति = दूर करता है।

अध्यस्यति = आरोप लगाता है।

निरस्यति = हटाता है।

उदस्यति = निकलता है।

परास्यति = परास्त करता है।

समस्यति = संक्षिप्त करता है।

अभ्यस्यति = कण्ठस्थ करता है।

विन्यस्यति = स्थापित करता है।

#### तृ = तैरना

तरति = तैरता है।  
 अवतरति = उतरता है। अवतार लेता है।  
 वितरति = बाँटता है, देता है।  
 उत्तरति = जवाब देता है।  
 संतरति = तैरता है।

#### पद् = चलना, जाना

पद्यते = जाता है।  
 संपद्यते = सुखी होता है।  
 विपद्यते = मरता है।  
 आपद्यते = आफत में पड़ता है।  
 प्रपद्यते = शरण में जाता है।  
 प्रतिपद्यते = आज्ञा माँगता है।

#### अञ्च् = जाना या पूजा करना

अञ्चति = जाता है, पूजा करता है।  
 पराञ्चति = लौटता है।  
 प्रत्यञ्चति = अवनति पाता है।  
 उदञ्चति = ऊपर जाता है।  
 अदाञ्चति = अधोमुख होता है।

#### गृह् = लेना

गृह्णाति = लेता है।  
 अनृगृह्णाति = कृपा करता है।  
 अगृह्णाति = छिपता है।  
 दुरागृह्णाति = हठ करता है।  
 प्रतिगृह्णाति = दान लेता है।  
 निगृह्णाति = कैद करता है।

#### क्री = क्रय करना, खरीदना

क्रीणीते = खरीदता है।  
 विक्रीणीते = बेचता है।  
 परिक्रीणीते = मोल लेता है।  
 अवक्रीणीते = खरीदता है।

**एति = जाना**

- अन्वेति = पीछे मिलता है।
- विपर्येति = उल्टा समझता है।
- प्रत्येति = विश्वास करता है।
- अत्येति = नष्ट होता है।
- प्रतिपद्यते = आज्ञा माँगता है।
- उपैति = पास आता है, प्राप्त करता है।
- व्ययेति = खर्च करता है।
- अवैति = जानता है।
- भवेति = मानता है।
- अपैति = दूर होता है।
- उदेति = उदय होता है।
- अभ्येति = सामने ले आता है।
- अन्वेति = पीछे-पीछे चलता है।

**आप् = प्राप्त करना, पाना**

- आप्नोति = प्राप्त करता है।
- व्याप्नोति = व्याप्त करता है।
- समाप्नोति = समाप्त करता है।
- प्राप्नोति = पाता है।

**चि = चुनना**

- चिनोति = चुनना है।
- परिचिनोति = पहनता है।
- निचिनोति = इकट्ठा करता है।
- उपचिनोति = बढ़ाता है।
- अपचिनोति = घटाता है।
- संचिनोति = संचित करता है।
- अवचिनोति = एकत्र करता है।

**ज्ञा = जानना**

- जानाति = जानता है।
- जानीते = प्रसन्न होता है।
- अपजानीते = छिपाता है।
- प्रतिजानीते = प्रतिज्ञा करता है।
- अनुजानाति = अनुमति देता है।
- उपजानाति = प्रारम्भ करता है।
- अवजानाति = अपमान करता है।
- संजानीते = देखता है।

**पत् = गिरना**

- पतति = गिरता है।
- प्रणिपतति = प्रमाण करता है।

निपतति = गिरता है।

उत्पतति = उड़ता है।

प्रपतति = गिरता है।

**क्रम् = पैदल चलना**

- क्रमति = चलता है।
- परिक्रमति = परिक्रमा करता है।
- क्रमते = उत्साह करता है।
- उपक्रमते = आरम्भ करता है।
- विक्रमते = आगे बढ़ता है।
- निष्क्रमति = निकलता है।
- आक्रमति = ऊपर जाता है, आक्रमण करता है।
- अपक्रमति = हटता है।

**चर् = घूमना**

- चरति = घूमता है
- चरति = खाता है।
- संचरति = संचरण करता है, साथ चलता है।
- विचरति = विचरण करता है।
- आचरति = आचरण करता है।
- अनुचरति = पीछे चलता है।
- उच्चरते = उल्लंघन करता है।
- उच्चरति = ऊपर जाता है, बोलता है।
- उपचरति = उपचार करता है।
- अनुचरति = अनुसरण करता है।
- संचरते = भ्रमण करता है।
- अपचरति = विपरीत करता है।
- व्यभिचरति = व्यभिचार करता है।
- परिचरति = सेवा करता है।

**धा = धारण करना, पोषण करना**

- दधाति = धारण करता है।
- निधत्ति = रखता है।
- प्रणिधत्ते = ध्यान रखता है।
- प्रतिनिधत्ते = प्रतिनिधित्व करता है।
- विद्धति = विधान करता है।
- अन्तर्धत्ते = छिपाता है।
- आधत्ते = स्थापित करता है।

**रुह् = जमना**

- रोहति = उगता है।
- प्ररोहति = उत्पन्न करता है।
- अधिरोहति = चढ़ता है।

अवरोहति = उतरता है।  
 आरोहति = बढ़ता है।  
 सरोहति = मिलता है।

**लप् = बोलना**

विलपति = विलाप करता है।  
 प्रलपति = वकबास करता है, प्रलाप करता है।  
 आलपति = बोलता है, आलाप करता है।  
 संलपति = वार्त्तालाप करता है।  
 अपलपति = छिपाता है।

**सद् = ठहरना, दुःखी होना**

सीदति = ठहरता है, दुःखी होता है।  
 प्रसीदति = प्रसन्न होता है।  
 विषीदति = खिन्न होता है।  
 निषीदति = थकता है, बैठता है।  
 अवसीदति = थकता है, दुःखी होता है।  
 उपसीदति = पास बैठता है।

**कृ = करना (आत्मनेपद)**

कुरुते = करता है।  
 उत्कुरुते = चुगली करता है।  
 उत्कुरुते = धमकाता है।  
 उपकुरुते = सेवा करता है।

प्रकुरुते = जबरदस्ती करता है।  
 उपस्कुरुते = सुधार करता है।  
 प्रकुरुते = कथा कहता है।  
 प्रकुरुते = धर्मार्थ लगाता है।

**बन्ध् = बाँधना**

बध्नाति = बाँधता है।  
 प्रबध्नाति = प्रबन्ध करता है।  
 निबध्नाति = निबन्ध लिखता है।  
 प्रतिबध्नाति = रोक लगाता है, प्रतिबन्ध लगाता है।  
 उद्बध्नाति = फाँसी लगाता है।  
 निबध्नाति = प्रेम करता है।

**जय् = जीतना (आत्मनेपद)**

जयते = जीतता है।  
 विजयते = जीतता है, विजयी होता है।  
 पराजयते = पराजित होता है। हारता है।

**स्था (तिष्ठ) = ठहरना (आत्मने पद)**

तिष्ठते = ठहरता है।  
 सन्तिष्ठते = मारता है।  
 अवतिष्ठते = ठहरता है।  
 प्रतिष्ठते = सम्मान पाता है।  
 वितिष्ठते = विचलता है।

□□

**खण्ड-‘घ’ : पठित-अवबोधनम्****अध्याय - 1 गद्यांशः****2. स्वर्णकाकः****पाठ का सारांश**

प्रस्तुत पाठ श्री पद्मशास्त्री द्वारा रचित “विश्वकथाशतकम्” नामक कथासंग्रह से लिया गया है, जिसमें विभिन्न देशों की सौ लोक कथाओं का संग्रह है। यह वर्मा देश की एक श्रेष्ठ कथा है, जिसमें लोभ और उसके दुष्परिणाम के साथ-साथ त्याग और उसके सुपरिणाम का वर्णन, एक सुनहरे पंखों वाले कौवे के माध्यम से किया गया है।

पुरा कर्षिचिद् ग्रामे एका निर्धना वृद्धा स्त्री न्यवसत्। तस्याश्चैका दुहिता विनम्रा मनोहरा चासीत् एकदा माता स्थाल्यां तण्डुलान्निक्षिप्य पुत्रीमादिदेश - सूर्यापते तण्डुलान् खगेभ्यो रक्ष। किञ्चित्कालादनन्तरम् एको विचित्रः काकः समुड्डीय तामुपाजगाम।

नैतादृशः स्वर्णक्षो रजतचञ्चुः स्वर्णकाकस्तथा पूर्वं दृष्टः। तं तण्डुलान् खादन्तं हसन्तञ्च विलोक्य बालिका रोदितुमारब्धा। तं निवारयन्ती सा प्रार्थयत्-तण्डुलान् मा भक्षय। मदीया माता अतीव निर्धना वर्तते। स्वर्णपक्षः काकः प्रोवाच, मा शुचः। सूर्योदयात्प्राग् ग्रामाद्बहिः पिप्पलवृक्षमनु त्वयागन्तव्यम्। अहं तुभ्यं तण्डुलमूल्यं दास्यामि। प्रहर्षिता बालिका निद्रामपि न लेभे।

सूर्योदयात्पूर्वमेव सा तत्रोपस्थिता । वृक्षस्योपरि विलोक्य सा चाश्चर्यचकिता सञ्जाता यत्तत्र स्वर्णमयः प्रासादो वर्तते । यदा काकः शयित्वा प्रबुद्धस्तदा तेन स्वर्णगवाक्षात्कथितं हंहो बाले ! त्वमागता, तिष्ठ, अहं त्वत्कृते सोपानमवतारयामि, तत्कथय स्वर्णमयं रजतमयमुत ताम्रमयं वा ? कन्या प्राबोचत् अहं निर्धनमातुर्दुहिताऽस्मि । ताम्रसोपानेनैव आगमिष्यामि । परं स्वर्णसोपानेन सा स्वर्ण-भवनमाससाद ।

चिरकालं भवने चित्रविचित्रवस्तूनि सज्जितानि दृष्ट्वा सा विस्मयं गता । श्रान्तां तां विलोक्य काकः प्राह-पूर्वं लघुप्रातराशः क्रियताम्-वद त्वं स्वर्णस्थाल्यां भोजनं करिष्यति किं वा रजतस्थाल्यामुत ताम्रस्थालयाम् ? बालिका व्याजहार-ताम्रस्थाल्यामेवाहं निर्धना भोजनं करिष्यामि । तदा सा कन्या चाश्चर्यचकिता सञ्जाता यदा स्वर्णकाकेन स्वर्णस्थाल्यां भोजनं परिवेषितम् । नैतादृक् स्वादु भोजनमद्यावधि बालिका खादितवती । काको ब्रूते-बालिके ! अहमिच्छामि यत्त्वं सर्वदा चात्रैव तिष्ठ परं तव माता वर्तते चैकाकिनी । त्वं शीघ्रमेव स्वगृहं गच्छ ।

इत्युक्त्वा काकः कक्षाभ्यन्तरात्तिस्रो मञ्जूषा निस्सार्य तां प्रत्यवदत्-बालिके ! यथेच्छं गृहाण मञ्जूषामेकाम् । लघुतमां मञ्जूषां प्रगृह्य बालिकया कथितमियदेव मदीयतण्डुलानां मूल्यम् ।

गृहमागत्य तया समुद्घाटितया, तस्यां महार्हाणि हीरकाणि विलोक्य सा प्रहर्षिता तद्दिनाद्धनिका च सञ्जाता ।

तस्मिन्ननेन ग्रामे एकाऽपरा लुब्धा वृद्धा न्यवसत् । तस्या अपि एक पुत्री आसीत् । ईर्ष्या सा तस्य स्वर्णकाकस्य रहस्यमभिज्ञातवती । सूर्योदये तण्डुलान्निक्षिप्य तयापि स्वसुता रक्षार्थं नियुक्ता । तथैव स्वर्णपक्षः काकः तण्डुलान् भक्षयन् तामपि तत्रैवाकारयत् । महां तण्डुलमूल्यं प्रयच्छ । काकोऽब्रवीत्-अहं त्वत्कृते सोपानमुत्तारयामि । तत्कथय स्वर्णमयं रजतमयं ताम्रमयं वा । गर्वितया बालिकया प्रोक्तम्-स्वर्णकाकः तां भोजनमपि ताम्रभाजने ह्यकारयत् ।

प्रतिनिवृत्तिकाले स्वर्णकाकेन कक्षाभ्यन्तरात्तिस्रो मञ्जूषाः तत्पुरः समुत्क्षिप्ताः । लोभाविष्टा सा बृहत्तमां मञ्जूषाः गृहीतवती । गृहमागत्य सा हर्षिता यावद् मञ्जूषामुद्घाटयति तावत्तस्यां भीषणः कृष्णसर्पो विलोकिताः । लुब्धया बालिकया लोभस्य फलं प्राप्तम् । तदनन्तरं सा लोभं पर्यत्यजत् ।

### शब्दार्थाः

न्यवसत्	अवसत्	रहता था/रहती थी
दुहिता	सुता	पुत्री
स्थाल्याम्	स्थालीपात्रे	थाली में
खगेभ्यः	पक्षिभ्यः	पक्षियों से
समुद्डीय	उत्प्लुत्य	उड़कर
उपाजगाम	समीपम् आगतवान्	पास पहुँचा
स्वर्णपक्षः	स्वर्णमयः पक्षः	सोने का पंख
रजतचञ्चुः	रजतमयः चञ्चुः	चाँदी की चोंच
तण्डुलान्	अक्षतान्	चावलों को
निवारयन्ती	वारणं कुर्वन्ती	रोकती हुई
मा शुचः	शोकं मा कुरु	दुःख मत करो
प्रोवाच	अकथयत्	कहा
प्रहर्षिता	प्रसन्ना	खुश हुई
प्रासादः	भवनम्	महल
गवाक्षात्	वातायनात्	खिड़की से
सोपानम्	सोपानम्	सीढ़ी
अवतारयामि	अवतीर्णं करोमि	उतारता हूँ
आससाद	प्राप्नोत्	पहुँचा
विलोक्य	दृष्ट्वा	देखकर
प्राह	उवाच	कहा
प्रातराशः	कल्यवर्तः	सुबह का नाश्ता
व्याजहार	अकथयत्	कहा



पर्यवेक्षितम्	पर्यवेक्षणं कृतम्	परोसा गया
महाहाणि	बहुमूल्यानि	बहुमूल्य
लुब्धा	लोभवशीभूता	लोभी
निर्भर्त्सयन्ती	भर्त्सनां कुर्वन्ती	निन्दा करती हुई
पर्यत्यजत्	अत्यजत्	छोड़ दिया

□□

#### 4. कल्पतरुः



#### पाठ का सारांश

प्रस्तुत पाठ 'वेतालपञ्चविंशतिः' नामक कथा संग्रह से लिया गया है, जिसमें मनोरञ्जक एवम् आश्चर्यजनक घटनाओं के माध्यम से जीवनमूल्यों का निरूपण किया गया है। इस कथा में जीमूतवाहन अपने पूर्वजों के काल से गृहोद्यान में आरोपित कल्पवृक्ष से सांसारिक द्रव्यों को न माँगकर संसार के प्राणियों के दुःखों को दूर करने का वरदान माँगता है क्योंकि धन तो पानी की लहर के समान चंचल है, केवल परोपकार ही इस संसार का सर्वोत्कृष्ट तथा चिरस्थायी तत्त्व है।

1. अस्ति हिमवान् नाम सर्वरत्नभूमिर्नगेन्द्रः। तस्य सानोरुपरि विभाति कञ्चनपुरं नाम नगरम्। तत्र जीमूतकेतुरिति श्रीमान् विद्याधरपतिः वसति स्म। तस्य गृहोद्याने कुलक्रमागतः कल्पतरुः स्थितः। स राजा जीमूतकेतुः तं कल्पतरुम् आराध्य तत्प्रसादात् च बोधिसत्त्वांशसम्भवं जीमूतवाहनं नाम पुत्रं प्राप्नोत्। स महान् दानवीरः सर्वभूतानुकम्पी च अभवत्। तस्य गुणैः प्रसन्नः स्वसचिवैश्च प्रेरितः राजा कालेन सम्प्राप्तयौवनं तं यौवराज्येऽभिषिक्तवान्। यौवराज्ये स्थितः स जीमूतवाहनः कदाचित् हितैषिभिः पितृमन्त्रिभिः उक्तः - “युवराज! योऽयं सर्वकामदः कल्पतरुः तवोद्याने तिष्ठति स तव सदा पूज्यः। अस्मिन् अनुकूले स्थिते शक्रोऽपि नास्मान् बाधितुं शक्नुयात्” इति॥ 1॥
2. आकर्ण्यैतत् जीमूतवाहनः अन्तरचिन्तयत् - “अहो बत! ईदृशममरपादपं प्राप्यापि पूर्वं पुरुषैरस्माकं तादृशं फलं किमपि नासादितं किन्तु केवलं कैश्चिदेव कृपणैः कश्चिदपि अर्थोऽर्थितः। तदहमस्मात् मनोरथमभीष्टं साधयामि” इति। एवमालोच्य स पितुरन्तिकमागच्छत्। आगत्य च सुखमासीनं पितरमेकान्ते न्यवेदयत् - “तात! त्वं तु जानासि एव यदस्मिन् संसारसागरे आशरीरमिदं सर्वं धनं वीचिवच्चञ्चलम्। एकः परोपकार एवास्मिन् संसारेऽनश्वरः यो युगान्पर्यन्तं यशः प्रसूते। तदस्माभिरिदृशः कल्पतरुः किमर्थं रक्षयते? यैश्च पूर्वैरयं ‘मम मम’ इति आग्रहेण रक्षितः, ते इदानीं कुत्र गताः? तेषां कस्यायम्? अस्य वा के ते? तस्मात् परोपकारैकफलसिद्धये त्वदाज्ञया इमं कल्पपादपम् आराधयामि॥ 2॥
3. अथ पित्रा ‘तथा’ इति अभ्यनुज्ञातः स जीमूतवाहनः कल्पतरुम् उपगम्य उवाच- “देव! त्वया अस्मत्पूर्वेषाम् अभीष्टाः कामाः पूरिताः, तन्मैकं कामं पूरय। यथा पृथ्वीमदरिद्रां पश्यामि, तथा करोतु देव” इति। एवंवादिनि। जीमूतवाहने “त्यक्तस्त्वया एषोऽहं यातोऽस्मि” इति वाक् तस्मात् तरोरुद्भूत्।  
क्षणेन च स कल्पतरुः दिवं समुत्पत्य भुवि तथा वसूनि अवर्षत् यथा न कोऽपि दुर्गत आसीत्। ततस्तस्य जीमूतवाहनस्य सर्वजीवानुकम्पया सर्वत्र यशः प्रथितम्॥ 3॥

#### शब्दार्थाः

अदरिद्राम्	दरिद्रहीनाम्	दरिद्रता से रहित अर्थात् सम्पन्न
हिमवान्	हिमालयः	हिमालय
नगेन्द्रः	हिमालयः	हिमालय
सानोः	पर्वतराजः	पर्वतों का राजा
कुलक्रमागतः	कुलक्रमाद् आगतः कुलपरम्परया संप्राप्तः	कुल-परम्परा से प्राप्त हुआ
यौवराज्ये	युवराजपदे	युवराज के पद पर
शक्रः	इन्द्रः	इन्द्र
अर्थितः	याचितः	माँगा
अन्तिकम्	समीपम्	पास में



वीचिवत्	तरङ्गवत्	तरङ्ग की तरह
अभ्यनुज्ञातः	अनुमतः	अनुमति पाया हुआ
अर्थिने	याचकाय	माँगने वाले के लिए, भिखारी के लिए
दिवम्	स्वर्गम्	स्वर्ग
वसूनि	धनानि	धन
उपगम्य	समीपं गत्वा	पास में जाकर
दुर्गतः	दुर्गतिम् आपन्नः	पीड़ित, निर्धन
सर्वजीवानुकम्पया	सर्वजीवेभ्यः कृपया	सभी जीवों के प्रति कृपा से
प्रथितम्	प्रसिद्धम्	प्रसिद्ध हो गया

□□

## 6. भ्रान्तो बालः



### पाठ का सारांश

प्रस्तुत पाठ 'संस्कृत प्रौढपाठावलि' नामक ग्रन्थ से सम्पादित कर लिया गया है। इस कथा में एक ऐसे बालक का चित्रण है, जिसका मन अध्ययन की अपेक्षा खेल-कूद में लगा रहता है। यहाँ तक कि वह खेलने के लिए पशु-पक्षियों तक का आवाहन (आवाहन) करता है किन्तु कोई उसके साथ खेलने के लिए तैयार नहीं होता। इससे वह बहुत निराश होता है। अन्ततः उसे बोध होता है कि सभी अपने-अपने कार्यों में व्यस्त हैं। केवल वही बिना किसी काम के इधर-उधर घूमता रहता है। वह निश्चय करता है कि अब व्यर्थ में समय गँवाना छोड़कर अपना कार्य करेगा।

(i) भ्रान्तः कश्चन बालः पाठशालागमनवेलायां क्रीडितुं निर्जगाम। किन्तु तेन सह केलिभिः कालं क्षेप्तुं तदा कोऽपि न वयस्येषु उपलभ्यमान आसीत्। यतस्ते सर्वेऽपि पूर्वदिनापाठान् स्मृत्वा विद्यालयगमनाय त्वरमाणा बभूवुः। तन्द्रालुर्बालो लज्जया तेषां दृष्टिपथमपि परिहरन्नेकाकी किमप्युद्यानं प्रविवेश।

स चिन्तयामास-विरमन्त्वेते वराकाः पुस्तकदासाः। अहं पुनरात्मानं विनोदयिष्यामि। ननु भूयो द्रक्ष्यामि क्रुद्धस्य उपाध्यायस्य मुखम्। सन्त्वेते निष्कुटवासिन एव प्राणिनो मम वयस्या इति।

(ii) अथ स पुष्पोद्यानं व्रजन्तं मधुकरं दृष्ट्वा तं क्रीडाहेतुराह्वयत्। स द्विस्त्रिरस्याह्वानमेव न मानयामास। ततो भूयो भूयः हठमाचरति बालो सोऽगायत्-वयं हि मधुसंग्रहव्यग्रा इति।

तदा सा बालः 'कृतमनेन मिथ्यागर्वितेन कीटेन' इत्यन्यतो दत्तदृष्टिश्चटकमेकं चञ्च्वा तृणशलाकादिकमाददानमपश्यत्। उवाच च—“अयि चटकपोत! मानुषस्य मम मित्रं भविष्यसि। एहि क्रीडावः। त्यज शुष्कमेतत् तृणं स्वादूनि भक्ष्यकवलानि ते दास्यामि” इति। स तु 'नीडः कार्यो बटदृशाखायां तद्यामि कार्येण' इत्युक्त्वा स्वकर्मव्यग्रो बभूव।

(iii) तदा खिन्नो बालकः एते पक्षिणो मानुषेषु नोपगच्छन्ति। तदन्वेष्टाम्यपरं मानुषोचितं विनोदयितारमिति परिक्रम्य पलायमानं कमपि श्वानमवालोकयत्। प्रीतो बालस्तमित्थं संबोध्यामास— रे मानुषाणां मित्र! किं पर्यटसि अस्मिन् निदाघदिवसे? आश्रयस्वेदं प्रच्छयशीतलं तरुमूलम्। अहमपि क्रीडासहायं त्वामेवानुरूपं पश्यामीति। कुक्कुरः प्रत्याह—

यो मां पुत्रप्रीत्या पोषयति स्वामिनो गृहे तस्य।

रक्षानियोगकरणान्न मया भ्रष्टव्यमीषदपि ॥

(iv) सर्वैरेवं निषिद्धः स बालो विघ्नितमनोरथः सन्—‘कथमस्मिन् जगति प्रत्येक स्व-स्वकृत्ये निमग्नो भवति। न कोऽप्यहमिव वृथा कालक्षेपं सहते। नमः एतेभ्यः यैर्मे तन्द्रालुतायां कुत्सा समापादिता। अथ स्वोचितमहमपि करोमि इति विचार्य त्वरितं पाठशालामुपजगाम। ततः प्रभृति स विद्याव्यसनी भूत्वा महतीं वैदुषीं प्रथां सम्पदं च लेभे।’

### शब्दार्थाः

भ्रान्तः	भ्रमयुक्तः	भ्रमित
क्रीडितुम्	खेलितुम्	खेलने के लिए

निर्जगाम	निष्क्रान्तः	निकल गया
केलिभिः	क्रीडाभिः	खेल द्वारा
कालं क्षेप्तुम्	समयं यापयितुम्	समय बिताने के लिए
त्वरमाणाः	त्वरां कुर्वन्तः, त्वरयन्तः	शीघ्रता करते हुए
तन्द्रालुः	अलसः अक्रियः	आलसी
दृष्टिपथम्	दृष्टिम्	निगाह
चिन्तयामास	अचिन्तयत्	सोचा
पुस्तकदासाः	पुस्तकानां दासाः	पुस्तकों के गुलाम
उपाध्यायस्य	आचार्यस्य	गुरु के
निष्कुटवासिनः	वृक्षकोटरनिवासिनः	वृक्ष के कोटर में रहने वाले
क्रीडाहेतोः	केलिनिमित्तम्	खेलने के निमित्त
आह्वानम्	आमन्त्रणम्	बुलावा
हठमाचरति	आग्रहपूर्वकं व्यवहारं कुर्वति सति	हठ करने पर
मधुसंग्रहव्यग्राः	पुष्परससंकलनतत्परः	पुष्प के रस के संग्रह में लगे हुए
भूयो भूयः	पुनः पुनः	बार-बार
मिथ्यागर्वितेन	व्यर्थाहङ्कारयुक्तेन	झूठे गर्व वाले
चटकम्	पक्षी	चिड़िया
चञ्च्वा	चञ्चुपुटेन	चोंच से
आददानम्	गृह्णन्तम्	ग्रहण करते हुए को
स्वादूनि	स्वादिष्टानि	स्वादयुक्त
भक्ष्यकवलानि	भक्षणीयग्रासाः	खाने के लिए उपयुक्त कौर
स्वकर्मव्यग्रः	स्वकीयकार्येषु तत्परः	अपने कार्यों में संलग्न
अन्वेष्ट्यामि	अन्वेषणं करोमि	खोजता हूँ
विनोदयितारम्	मनोरञ्जनकारिणम्	मनोरंजन करने वाले को
पलायमानम्	धावन्तम्	भागते हुए
अवलोकयत्	अपश्यत्	देखा
बटदुशाखायां	वटवृक्षस्य शाखायां	बरगद के पेड़ की शाखा पर
संबोधयामास	संबोधितवान्	संबोधित किया
निदाघदिवसे	ग्रीष्मदिने	गर्मी के दिन में
केलीसहायम्	क्रीडासहायकम्	खेल में सहयोगी
अनुरूपम्	योग्यम्	उपयुक्त
कुक्कुरः	श्व	कुत्ता
रक्षानियोगकरणात्	सुरक्षाकार्यवशात्	रक्षा के कार्य में लगे होने से
भ्रष्टव्यम्	पतितव्यम्	हटना चाहिए
ईषदपि	अल्पमात्रम् अपि	थोड़ा-सा भी
निषिद्धः	अस्वीकृतः	मना किया गया
विघ्नितमनोरथः	खण्डितकामः	टूटी इच्छाओं वाला
कालक्षेपम्	समयस्य यापनम्	समय बिताना

तन्द्रालुतायाम्

तन्द्रालुजनस्य भावे, अलसत्वे

आलस्य में

कुत्सा

घृणा, भर्त्सना

घृणाभाव

विद्याव्यसनी

अध्ययनरतः

विद्या में रत रहने वाला

प्रथाम्

प्रसिद्धिम्

ख्याति, प्रसिद्धि

□□

## 8. लौहतुला:



## पाठ का सारांश

प्रस्तुत पाठ विष्णुशर्मा द्वारा रचित 'पञ्चतन्त्रम्' नामक कथाग्रन्थ के 'मित्रभेद' नामक तन्त्र से सङ्कलित है। इसमें विदेश से लौटकर जीर्णधन नामक व्यापारी अपनी धरोहर (तराजू) को सेठ से माँगता है। 'तराजू चूहे खा गये हैं' एकसा सुनकर जीर्णधन उसके पुत्र को स्नान के बहाने नदी तट पर ले जाकर गुफा में छिपा देता है। सेठ द्वारा अपने पुत्र के विषय में पूछने पर जीर्णधन कहता है कि 'पुत्र को बाज उठा ले गया है।' इस प्रकार विवाद करते हुए दोनों न्यायालय पहुँचते हैं जहाँ धर्माधिकारी उन्हें समुचित न्याय प्रदान करते हैं।

(1) आसीत् कस्मिंश्चिद् अधिष्ठाने जीर्णधनो नाम वणिक्पुत्रः। स च विभवंक्षयाद्देशान्तरं गन्तुमिच्छन् व्यचिन्तयत्—

यत्र देशेऽथवा स्थाने भोगा भुक्ताः स्ववीर्यतः।

तस्मिन् विभवहीनो यो वसेत् से पुरुषाधमः॥

तस्य च गृहे लौहघटिता पूर्वपुरुषोपार्जिता तुलासीत्। तां च कस्यचित् श्रेष्ठिनो गृहे निक्षेपभूतां कृत्वा देशान्तरं प्रस्थितः। ततः सुचिरं कालं देशान्तरं यथेच्छया भ्रान्त्वा पुनः स्वपुरमागत्य तं श्रेष्ठिनमुवाच—“भोः श्रेष्ठिन्! दीयतां मे सा निक्षेपतुला।” स आह— “भोः! नास्ति सा, त्वदीया तुला मूषकैर्भक्षिता” इति।

(ii) जीर्णधन आह—“भोः श्रेष्ठिन्। नास्ति दोषस्ते, यदि मूषकैर्भक्षितेति। ईदृगेवायं संसारः। न किञ्चिदत्र शाश्वतमस्ति। परमहं नद्यां स्नानार्थं गमिष्यामि। तत् त्वमात्मीयं शिशुमेनं धनदेवनामानं मया सह स्नानोपकरणहस्तं प्रेषय” इति।

स श्रेष्ठी स्वपूत्रमुवाच—“वत्स! पितृव्योऽयं तव, स्नानार्थं यास्यति, तद् गम्यतामनेन सार्धम्” इति।

अथासौ वणिक्शिशुः स्नानोपकरणमादाय प्रहृष्टमानाः तेन अभ्यागतेन सह प्रस्थितः। तथानुष्ठिते से वणिक् स्नात्वा तं शिशुं गिरिगुहायां प्रक्षिप्य, तद्द्वारं बृहच्छलयाच्छाद्य सत्वरं गृहमागतः।

(iii) पृष्ठश्च तेन वणिजा—“भोः! अभ्यागत! कथ्यतां कुत्र मे शिशुर्यस्त्वया सह नदीं गतः”? इति।

स आह—“नदीतटात्स श्येनेन हतः” इति। श्रेष्ठ्याह—“मिथ्यावादिन्! किं क्वचित् श्येनो बालं हर्तुं शक्नोति? तत् समर्पय मे सुपम् अन्यथा राजकुले निवेदेयिष्यामि।” इति। स आह—“भोः सत्यवादिन्! यथा श्येनो बालं न नयति, तथा मूषका अपि लौहघटितां तुलां न भक्षयन्ति। तदर्पय मे तुलाम्, यदि दारकोण प्रयोजनम्।” इति।

(iv) एवं विवादमानौ तो द्वावपि राजकुलं गतौ। तत्र श्रेष्ठी तारस्वरेण प्रोवाच—“भोः!

अब्रह्मण्यम्! अब्रह्मण्यम्! मम शिशुरनेन चौरैणापहतः” इति।

अथ धर्माधिकारिणस्तमूचुः—“भोः! समर्प्यतां श्रेष्ठिसुतः”।

स आह—“किं करोमि? पश्यतो मे नदीतटाच्छ्येनेन अपहतः शिशुः”। इति। तच्छ्रुत्वा ते प्रोचुः—भोः! न सत्यमभिहितं भवता—किं श्येनः शिशुं हर्तुं समर्थो भवति?

स आह—भोः भोः! श्रूयतां मद्बचः—

तुलां लौहसहस्रस्य यत्र खादन्ति मूषकाः।

राजन्तत्र हरेच्छ्येनो बालकं, नात्र संशयः॥

ते प्रोचुः—“कथमेतत्”।

ततः स श्रेष्ठी सभ्यानामग्रे आदितः सर्वं वृत्तान्तं निवेदयामास। ततस्तैर्विहस्य द्वावपि तौ परस्परं संबोध्य तुला-शिशु-प्रदानेन सन्तोषितौ।

## शब्दार्थः

अधिष्ठाने	स्थाने	स्थान पर
विभवक्षयात्	धनाभावात्	धन के अभाव के कारण
स्ववीर्यतः	स्वपराक्रमेण	अपने पराक्रम से
लौहघटिता तुला	लौहनिर्मिता तुला	लोहे से बनी हुई तराजू
निक्षेपः	न्यासः	धरोहर
भ्रान्त्वा	भ्रमणं कृत्वा (देशाटनं कृत्वा)	पर्यटन करके
त्वदीया	तव, भवदीया	तुम्हारी
ईदृक्	एकादृशः	ऐसा ही
एनम्	एतम्/एनम् च पुंसि द्वितीयैकवचनेन उभे एव रूपे भवतः।	इसे, एतत् शब्द पुं. द्वि. वि. ए. व. में एतत्/एनम् दोनों ही रूप होते हैं।
आत्मीयम्	आत्मसम्बन्धि	अपना
स्नानोपकरणहस्तम्	स्नानसामग्री हस्ते यस्य सः, तम्	स्नान की सामग्री से युक्त हाथ वाला।
वणिजा	व्यापारिणा	व्यापारी के द्वारा
श्येनः	हिंसकप्रवृत्तिकः पक्षिविशेषः	बाज
अब्रह्मण्यम्	अन्यायरूपम् अनुचितम्	घोर अन्याय
समर्पय	देहि	दो
विवदमानौ	कलहं कुर्वन्तौ	झगड़ा करने हुए
तारस्वरेण	उच्चस्वरेण	जोर से
ऊचुः	अवदन्	बोले
अभिहितम्	कथितम्	कहा गया
मद्वचः	मम वचनानि	मेरी बातें
आदितः	प्रारम्भतः	आरम्भ से
निवेदयामास	निवेदनमकरोत्	निवेदन किया
विहस्य	हसित्वा	हँसकर
संबोध्य	बोधयित्वा	समझा बुझा कर

□□

## 11. पर्यावरणम्

## सारांशः

प्रस्तुत पाठ्यांश पर्यावरण को ध्यान में रखकर लिखा गया एक लघु निबन्ध है। वर्तमान युग में प्रदूषित वातावरण मानव-जीवन के लिए भयङ्कर अभिशाप बन गया है। नदियों का जल कलुषित हो रहा है, वन वृक्षों से रहित हो रहे हैं, मिट्टी का कटाव बढ़ने से बाढ़ की समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं। कल-कारखानों और वाहनों के धुएँ से वायु विषैली हो रही है। वन्य-प्राणियों की जातियाँ भी नष्ट हो रही हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार वृक्षों एवं वनस्पतियों के अभाव में मनुष्यों के लिए जीवित रहना असम्भव प्रतीत होता है। पत्र, पुष्प, फल काष्ठ, छाया एवं औषधि प्रदान करने वाले पादपों एवं वृक्षों की उपयोगिता वर्तमान समय में पूर्वापेक्षया अधिक है। ऐसी परिस्थिति में हमारा कर्तव्य है कि हम पर्यावरण के संरक्षणार्थ उपाय करें। वृक्षों के रोपण, नदी-जल की स्वच्छता, ऊर्जा के संरक्षण, वापी, कूप, तड़ाग, उद्यान आदि के निर्माण और उनको स्वच्छ रखने में प्रयत्नशील हों ताकि जीवन सुखमय एवं उपद्रव रहित हो सके।

- (i) प्रकृतिः समेषां प्राणिनां संरक्षणाय यतते। इयं सर्वान् पुष्पाति विविधैः प्रकारैः, तर्पयति च सुखसाधनैः। पृथिवी, जलं तेजो, वायुः, आकाशश्चास्याः प्रमुखानि तत्त्वानि। तान्येव मिलित्वा पृथक्तया वाऽस्माकं पर्यावरणं रचयन्ति। आव्रियते परितः समन्तात् लोकोऽनेनेति पर्यावरणम्। यथाऽजातशिशुः मातृगर्भे सुरक्षितस्तिष्ठति तथैव मानवः पर्यावरणकुक्षौ। परिष्कृत प्रदूषणरहितं च

पर्यावरणमस्मभ्यं सांसारिकं जीवनसुखं, सद्विचारं, सत्यसङ्कल्पं माङ्गलिकसामग्रीञ्च प्रददाति । प्रकृतिकोपैः आतङ्कितो जनः किं कर्तुं प्रभवति ? जलप्लावनैः, अग्निभयैः, भूकम्पैः, वात्याचक्रैः, उल्कापातादिभिश्च सन्तप्तस्य मानवस्य क्व मङ्गलम् ?

- (ii) अतएव प्रकृतिरस्माभिः रक्षणीया । तेन च पर्यावरणं रक्षितं भविष्यति । प्राचीनकाले लोकमङ्गलाशंसिन ऋषयो वने निवसन्ति स्म । यतो हि वने एव सुरक्षितं पर्यावरणमुपलभ्यते स्म । विविधा विहगाः कलकूजितैस्तत्र श्रोत्ररसायनं ददति ।

सरितो गिरिनिर्झराश्च अमृतस्वादु निर्मलं जलं प्रयच्छन्ति । वृक्षा लताश्च फलानि पुष्पाणि इन्धनकाष्ठानि च बाहुल्येन समुपहरन्ति । शीतलमन्दसुगन्धवनपवना औषधकल्पं प्राणवायुं वितरन्ति ।

- (iii) परन्तु स्वार्थान्धो मानवस्तदेव पर्यावरणमद्य नाशयति । स्वल्पलाभाय जना बहुमूल्यानि वस्तूनि नाशयन्ति । यन्त्रागाराणां विषाक्तं जलं नद्यां निपात्यते येन मत्स्यादीनां जलचराणां च क्षणेनैव नाशो जायते । नदीजलमपि तत्सर्वथाऽपेयं जायते । वनवृक्षा निर्विवेकं छिद्यन्ते व्यापारवर्धनाय, येन अवृष्टिः प्रवर्धते, वनपशवश्च शरणरहिता ग्रामेषु उपद्रवं विदधति । शुद्धवायुरपि वृक्षकर्तृनात् सङ्कटापन्नो जातः । एवं हि स्वार्थान्धमानवैर्विकृतिमुपगता प्रकृतिरेव तेषां विनाशकर्त्री सञ्जाता । पर्यावरणे विकृतिमुपगते जायन्ते विविधा रोगा भीषणसमस्याश्च । तत्सर्वमिदानीं चिन्तनीयं प्रतिभाति ।

- (iv) धर्मो रक्षति रक्षितः इत्यार्षवचनम् । पर्यावरणरक्षणमपि धर्मस्यैवाङ्गमिति ऋषयः प्रतिपादितवन्तः । तत एव वापीकूपतडागादिनिर्माणं देवायतनविश्रामगृहादिस्थापनञ्च धर्मसिद्धेः स्रोतोरूपेणाङ्गीकृतम् । कुक्कुरसूकरसर्पनकुलादिस्थलचरा, मत्स्यकच्छपमकरप्रभृतयो जलचराश्चापि रक्षणीयाः, यतस्ते स्थलमलापनोदिनो जलमलापहारिणश्च । प्रकृतिरक्षयैव सम्भवति लोकरक्षेति न संशयः ।

### शब्दार्थः

निनादय	नितरां वादय	गुंजित
पुष्पाणि	पोषणं करोति	पुष्ट करता है
अजातः शिशुः	अनुत्पन्नजातकः	अजन्मा शिशु
कुक्षौ	गर्भे	गर्भ में
जलप्लावनैः	जलौघैः	बाढ़ से
वात्याचक्रैः	वातचक्रैः	औंधी, बवंडर
लोकमङ्गलाशंसिनः	समाजकल्याणकामाः	जनता के कल्याण को चाहने वाला
श्रोत्ररसायनम्	कर्णामृतम्	कान को अच्छा लगने वाला
गिरिनिर्झराः	पर्वतानां प्रपाताः	पहाड़ों से निकलने वाले झरने
यन्त्रागाराणाम्	यन्त्रालयानाम्	कारखानों के
अपेयम्	पातुम् अयोग्यम्	न पीने योग्य
वृक्षकर्तृनात्	वृक्षाणाम् उच्छेदनात्	पेड़ों के काटने से
देवायतनम्	देवालयः मन्दिरम्	मन्दिर
स्थलमलापनोदिनः	भूमिमालापसारिणः	भूमि की गन्दगी को दूर करने वाले

□□

## अध्याय – 2 पद्यांशः

### 1. भारतीवसन्तगीति : (केवलं पाठनार्थवर्तते)



### पाठ का सारांश

प्रस्तुत गीत आधुनिक संस्कृत-साहित्य के प्रख्यात कवि पं. जानकी वल्लभ शास्त्री की रचना 'काकली' नामक गीतसंग्रह से संकलित है। इसमें सरस्वती की वन्दना करते हुए कामना की गई है कि हे सरस्वती! ऐसी वीणा बजाओं, जिससे मधुर मञ्जरियों से पीत पंक्तिवाले आम के वृक्ष, कोयल का कूजन, वायु का धीरे-धीरे बहना, अमराइयों के काले भ्रमरों का गुञ्जार और नदियों का (लीली के साथ बहता हुआ) जल, वसन्त ऋतु में मोहक हो उठे। स्वाधीनता संग्राम की पृष्ठभूमि में लिखी गयी यह गीतिका एक नवीन चेतना का आवाहन करती है तथा ऐसे वीणास्वर की परिकल्पना करती है जो स्वाधीनता प्राप्ति के लिए जनसमुदाय को प्रेरित करे।

निनादय नवीनामये वाणि ! वीणाम् ।  
 मृदुं गाय गीतिं ललित-नीति-लीनाम् ।  
 मधुर-मञ्जरी-पिञ्जरी-भूत-मालाः  
 वसन्ते लसन्तीह सरसा रसालाः  
 कलापाः ललित-कोकिला-काकलीनाम् ॥ 1 ॥  
 निनादय... ॥  
 वहति मन्दमन्दं सनीरे समीरे  
 कलिन्दात्मजायास्सवानीरतीरे,  
 नतां पङ्क्तिमालोक्य मधुमाधवीनाम् ॥ 2 ॥  
 निनादय... ॥  
 ललित-पल्लवे पादपे पुष्पपुञ्जे  
 मलयमारुतोच्चुम्बिते मञ्जुकुञ्जे,  
 स्वनन्तीन्ततिम्प्रेक्ष्य मलिनामलीनाम् ॥ 3 ॥  
 निनादय... ॥  
 लतानां नितान्तं सुमं शान्तिशीलम्  
 चलेदुच्छलेत्कान्तसलिलं सलीलम्,  
 तवाकर्ण्य वीणामदीनां नदीनाम् ॥ 4 ॥  
 निनादय... ॥

### शब्दार्थः

निनादय	नितरां वादय	गुंजित करो/बजाओ
मृदुं	चारु, मधुरं	कोमल
ललितनीतिलीनाम्	सुन्दरनीतिसंलग्नाम्	सुन्दर नीति में लीन
मञ्जरी	आम्रकुसुमम्	आम्रपुष्प
पिञ्जरीभूतमालाः	पीतपङ्क्तयः	पीले वर्ण से युक्त पंक्तियाँ
लसन्ति	शोभन्ते	सुशोभित हो रही हैं
इह	अत्र	यहाँ
सरसाः	रसपूर्णाः	मधुर
रसालाः	आम्राः	आम के पेड़
कलापाः	समूहाः	समूह
काकली	कोकिलानां ध्वनिः	कोयल की आवाज
सनीरे	सजले	जल से पूर्ण
समीरे	वायौ	हवा में
कलिन्दात्मजायाः	यमुनायाः	यमुना नदी के
सवानीरतीरे	वेतसयुक्ते तटे	बेंत की लता से युक्त तट पर
नताम्	नतिप्राप्ताम्	झुकी हुई
मधुमाधवीनाम्	मधुमाधवीलतानाम्	मधुर मालती लताओं का
ललितपल्लवे	मनोहरपल्लवे	मन को आकर्षित करने वाले पत्ते

पुष्पपुञ्जे  
मलयामारुतोच्चुम्बिते  
मञ्जुकुञ्जे  
स्वनन्तीं  
ततिं  
प्रेक्ष्य  
मलिनाम्  
अलीनाम्  
सुमम्  
शान्तिशीलम्  
उच्छलेत्  
कान्तसलिलम्  
सलीलम्  
आकर्ण्य

पुष्पसमूहे  
मलयानिलसंस्पृष्टे  
शोभनलताविताने  
ध्वनिं कुर्वन्तीम्  
पङ्क्तिम्  
दृष्ट्वा  
कृष्णवर्णाम्  
भ्रमराणाम्  
कुसुमम्  
शान्तियुक्तम्  
ऊर्ध्वगच्छेत्  
मनोहरजलम्  
क्रीडासहितम्  
श्रुत्वा

पुष्पों के समूह पर  
चन्दन वृक्ष की सुगन्धित वायु से स्पर्श किये गये  
सुन्दर लताओं से आच्छादित स्थान  
ध्वनि करती हुई  
समूह को  
देखकर  
मलिन  
भ्रमरों के  
पुष्प को  
शान्ति से युक्त  
उच्छलित हो उठे  
स्वच्छ जल  
खेल-खेल के साथ  
सुनकर

□□

## 5. सूक्तिमौक्तिकम्



### पाठ का सारांश

मनोहारी और बहुमूल्य सुभाषित यहाँ संकलित हैं, जिनमें सदाचरण की महत्ता, प्रियवाणी की आवश्यकता, परोपकारी पुरुष का स्वभाव, गुणार्जन की प्रेरणा, मित्रता का स्वरूप और उत्तम पुरुष के समर्पक से होने वाली शोभा की प्रशंसा और सत्संगति की महिमा आदि विषयों का प्रतिपादन किया गया है।

वृत्तं यत्नेन संरक्षेद् वित्तमेति च याति च ।

अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्तस्तु हतो हतः ॥

— मनुस्मृतिः

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम् ।

आत्मनः प्रतिकूलानि परोषां न समाचरेत् ॥

— विदुरनीतिः

प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः ।

तस्माद् तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता ॥

— चाणक्यनीतिः

पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः

स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः ।

नादन्ति सस्यं खलु वारिवाहाः

परोपकाराय सतां विभूतयः ॥

— सुभाषितरत्नभाण्डागारम्

गुणेष्वेव हि कर्तव्यः प्रयत्नः पुरुषैः सदा ।

गुणयुक्तो दरिद्रोऽपि नेश्वरैरगुणैः समः ॥

— मृच्छकटिकम्

आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण

लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात् ।

दिनस्य पूर्वार्द्धपरार्द्धभिन्ना



छायेव मैत्री खलसज्जनानाम् ॥

— नीतिशतकम्

यत्रापि कुत्रापि गत भवेयु-

हंसा महीमण्डलमण्डनाय ।

हानिस्तु तेषां हि सरोवराणां

येषां मरालैः सह विप्रयोगः ॥

— भामिनीविलासः

गुणा गुणज्ञेषु गुणाः भवन्ति

ते निर्गुणं प्राप्य भवन्ति दोषाः ।

आस्वाद्यतोयाः प्रवहन्ति नद्यः

समुद्रमासाद्य भवन्त्यपेयाः ॥

— हितोपदेशः

## शब्दार्थः

वित्तम्	धनम्	धन, ऐश्वर्य
वृत्तम्	आचरणम्	आचरण, चरित्र
अक्षीणः	न क्षीणः, सम्पन्नः	नष्ट न हुआ
धर्मसर्वस्वम्	कर्तव्यसारः	धर्म (कर्तव्यबोध) का सब कुछ
प्रतिकूलानि	विपरीतानि	अनुकूल नहीं
तुष्यन्ति	तोषम् अनुभवन्ति	सन्तुष्ट होते हैं
वक्तव्यम्	कथनीयम्	कहना चाहिए
वारिवाहाः	मेघाः	जल वहन करने वाले बादल
विभूतयः	समृद्धयः	सम्पत्तियाँ
गुणयुक्तः	गुणरहितैः	गुणहीनों से
आरम्भगुर्वी	आदौ दीर्घा	आरम्भ में लम्बी
क्षयिणी	क्षयशीला	घटती स्वभाव वाली
वृद्धिमती	वृद्धिम् उपगता	लम्बी होती हुई, लम्बी हुई
पूर्वाद्धपरार्द्धभिन्ना	पूर्वाद्धेन परार्द्धेन च पृथग्भूता	पूर्वाद्ध और अपराद्ध (छाया) की तरह अलग-अलग
खलसज्जनानाम्	दुर्जनसुजनानाम्	दुष्टों और सज्जनों की
महीमण्डलमण्डनाय	पृथिवीमण्डलालङ्करणाय	पृथ्वी को सुशोभित करने के लिए
मरालैः	हंसैः	हंसों से
विप्रयोगः	वियोगः	अलग होना
गुणज्ञेषु	गुणज्ञातृषु जनेषु	गुणों को जानने वालों में
आस्वाद्यतोयाः	स्वादनीयजलसम्पन्नाः	स्वादयुक्त जल वाली
आसाद्य	प्राप्य	पाकर
अपेयाः	न पेयाः न पानयोग्याः	न पीने योग्य

□□

## 10. जटायोः शौर्यम्

## सारांशः

प्रस्तुत पाठ्यांश आदिकवि वाल्मीकि-प्रणीत रामायणम् के अरण्यकाण्ड से उद्धृत किया गया है जिसमें जटायु और रावण के युद्ध का वर्णन है। पंचवटी कानन में सीता का करुण विलाप सुनकर पक्षिश्रेष्ठ जटायु उनकी रक्षा के लिए दौड़े। वे रावण को परदाराभिमर्शनरूप



निन्द्य एवं दुष्कर्म से विरत होने के लिए कहते हैं। रावण की अपरिवर्तित मनोवृत्ति को देख वे उस पर भयावह आक्रमण करते हैं। महाबली जटायु अपने तीखे नखों पञ्जों से रावण के शरीर में अनेक घाव कर देते हैं तथा पञ्जों के प्रहार से उसके विशाल धनुष को खंडित कर देते हैं। टूटे धनुष, मारे गये अश्वों और सारथी वाला रावण विरथ होकर पृथ्वी पर गिर पड़ता है। कुछ ही क्षणों बाद क्रोधांध रावण जटायु पर प्राणघातक प्रहार करता है परंतु पक्षिश्रेष्ठ जटायु उससे अपना बचाव कर उस पर चञ्चु-प्रहार करते हैं, उसके बायें भाग की दशों भुजाओं को क्षत-विक्षत कर देते हैं।

सा तदा करुणा वाचो विलपन्ती सुदुःखिता ।

वनस्पतिगतं गृध्रं ददर्शायतलोचना ॥ 1 ॥

जटायो पश्य मामार्यं ह्रियमाणामनाथवत् ।

अनेन राक्षसेन्द्रेण करुणं पापकर्मणा ॥ 2 ॥

तं शब्दमवसुप्तस्तु जटायुरथ शुश्रुवे ।

निरीक्ष्य रावणं क्षिप्रं वैदेहीं च ददर्श सः ॥ 3 ॥

ततः पर्वतऋङ्गभस्तीक्ष्णतुण्डः खगोत्तमः ।

वनस्पतिगतः श्रीमान्व्याजहार शुभां गिरम् ॥ 4 ॥

निवर्तय मतिं नीचां परदाराभिमर्शनात् ।

न तत्समाचरेद्धीरो यत्परोऽस्य विगर्हयेत् ॥ 5 ॥

वृद्धोऽहं त्वं युवा धन्वी सरथः कवची शरी ।

न चाप्यादाय कुशली वैदेहीं मे गमिष्यसि ॥ 6 ॥

तस्य तीक्ष्णनखाभ्यां तु चरणाभ्यां महाबलः ।

चकार बहुधा गात्रे व्रणान्पतंगसत्तमः ॥ 7 ॥

ततोऽस्य सशरं चाप मुक्तामणिविभूषितम् ।

चरणाभ्यां महातेजा बभञ्जास्य महद्भुजः ॥ 8 ॥

स भग्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः ।

अङ्केनादाय वैदेहीं पपात भुवि रावणः ॥ 9 ॥

संपरिष्वज्य वैदेहीं वामेनाङ्केन रावणः ।

तलेनाभिजघानाशु जटायुं क्रोधमूर्च्छितः ॥ 10 ॥

जटायुस्तमतिक्रम्य तुण्डेनास्य खगाधिपः ।

वामबाहून्दश तदा व्यपाहरदरिन्दमः ॥ 11 ॥

### शब्दार्थः

ह्रियमाणाम्	नीयमानाम्	ले जाई जाती/अपहरण की जाती हुई
राक्षसेन्द्रेण	दानवपतिना	राक्षसों के राजा द्वारा
परदाराभिमर्शनात्	परस्त्रीस्पर्शात्	पराई स्त्री के स्पर्श से
विगर्हयेत्	निन्द्यात्	निन्दा करनी चाहिए
धन्वी	धनुर्धरः	धनुर्धन
कवची	कवचधारी	कवच धारण किया हुए
शरी	बाणधरः	बाण को लिए हुए
व्याजहार	अकथयत्	कहा
निवर्तय	वारणं कुरु	मना करो, रोको
व्यपाहरत्	उत्खातवान्	उखाड़ दिया
वैदेहीम्	सीताम्	सीता को

व्रणान्	प्रहारजनितस्फोटान्	प्रहार (चोट) से होने वाले घावों को
बभञ्ज	भग्नं कृतवान्	तोड़ दिया
पतगेश्वरः	जटायुः	जटायु (पक्षिराज)
विधूय	अपसार्य	दूर हटाकर
भग्नधन्वा	भग्नः धनुः यस्य सः	टूटे हुए धनुष वाला
हताश्वः	हताः अश्वाः यस्य सः	मारे गए घोड़ों वाला
आदाय	गृहीत्वा	लेकर
अभिजघान	हतवान्	मार डाला
आशु	शीघ्रम्	शीघ्र ही
तुण्डेन	मुखेन, चञ्च्वा	चोंच के द्वारा
खगाधिपः	पक्षिराजः	पक्षियों का राजा
अरिन्दमः	शत्रुदमनः शत्रुनाशकः	शत्रुओं को नष्ट करने वाला

□□

## अध्याय – 3 नाट्यांशः

### 3. सोमप्रभम् (केवल पठनार्थं वर्तते)



### पाठ का सारांश

प्रस्तुत पाठ प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा रचित 'प्रेक्षणसप्तकम्' नामक नाट्य-संग्रह से सम्पादित कर लिया गया है। यहाँ दहेज प्रथा के निन्दनीय रूप का उल्लेख किया गया है। अपनी माता की रक्षा के लिए बालिका सोमप्रभा द्वारा किया गया प्रयास विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

(ततः प्रविशति करतलाभ्यां चक्षुषी मार्जयन्ती पञ्चवर्षदेशीया बालिका सोमप्रभा)

विमला — अये जागरिता! त्वरस्व तावत्। परिहीयते विद्यालयगमवेला।

सोमप्रभा — अम्ब! अद्य न गमिष्यामि विद्यालयम्।

विमला — (हस्तेन सोमप्रभां गृहीत्वा) अये किमेतत् कथयसि। विद्यालयस्तु गन्तव्य एव प्रतिदिनम्।

(सोमप्रभायाः प्रस्थानम्)

श्वश्रूः — विमले! अयि दुष्टे! कुत्र मृतासि? कियतः कालात् शब्दापयामि।

विमला — (सकरुणं निशम्य) इयं मम श्वश्रूः सदैव मर्मघातिभिः कटुवचनैराक्षिपति माम्। (उच्चैः स्वरेण) अम्ब! इयमागच्छामि। किं करणीयम्? (परिक्रामति)। (ततः प्रतिशति साटोपं कोपं निरूपयन्ती श्वश्रूः)

विमलाः — अम्ब! किमादिशसि?

श्वश्रूः — (विडम्बयन्ती) किमादिशसि? किमिदानीमपि महादेव्याः प्रभातकालो न सञ्जातः?

विमला — प्रातःकालिकं कार्यजातमेव सम्पादयामि।

श्वश्रूः — प्रातः कालिकं कार्यजातं सम्पादयसि। इदानीमपि चायपेयस्य नास्ति कापि कथा। तव पिता आगत्य साधयिष्यति किं चायं ... येन काकिणी अपि न दत्ता ...

विमला — मम पितृपादम् किमर्थं कदर्थयसि अम्ब! यत्किमपि कथनीयं मां प्रत्येव कथय।

श्वश्रूः — (सभ्रूभङ्गं सभुजक्षेपं च) (अयं हय) शृणुत अस्याः दुष्टायाः अधरोत्तरम्।

एतावानेव प्रियो यदि पिता तर्हि तत्रैव गत्वा कथं न मृता पितुर्गृहे ... ?

- विमला** — स तु मां नेतुमागतः श्रावणे विगते। भवतीभिरेवे ...
- श्वश्रूः** — अयि दुष्टे! वेतनस्य गर्वमुद्वहसि? अतिमात्रं गर्वमुद्वहसि? अतिमात्रं गर्वितसि त्रिचतुरान् पणकानर्जयित्वा आनयसीत्येतेन। निष्ठीवनं करोमि तव पणकेषु। शुः! किं मन्यसे त्वम् अर्जयित्वा धनमानयसि? किं तव धनं तत्? तव पिता यावन्तं यौतकराशिं प्रतिज्ञातवान् तावतोऽर्धमेव समर्पितवान्।
- विमला** — अहो नृशंसता युष्माकम्। अहो लोलुपता ...
- श्वश्रूः** — अये! एतावत्तव साहसम् त्वं मामक्षिपसि। नेत्रे दर्शयसि माम्।  
(श्वश्रूः प्रविश्य)
- श्वश्रूः** — किं जातम्? कोऽयं कलहाडम्बरः प्रातः कालादेव? प्रातःकालिकं चायमपीदानीं यावन् लब्धम् ...
- श्वश्रूः** — का कथा चायपानस्य। त्रोटितानि अनया दुष्टया चायभाजनानि। न मया किमपि भणितम्, तथापि अधिक्षिपति मामिमम्। वयं नृशंसाः, वयं लोलुपाः, वयं राक्षसाः।
- श्वश्रूः** — एतत्सर्वं कथितमनया?
- विमला** — न मयैतत् कथितं पितः!
- श्वश्रूः** — पश्यत पश्यत अस्या दौरात्म्यं दुर्भगायाः। किं किं दुष्कृत्यमियं न करोति?  
सम्मुखमेव प्रत्युत्तरमपि ददाति, जिह्वां चालयतीयं मत्समक्षम्।
- श्वश्रूः** — (सक्रोधम्) अहो अस्या दुस्साहसम्!  
(श्वश्रूः श्वश्रूश्च तां न पश्यतः उभौ सक्रौर्यं सहिंस्त्रभावं विमलां निभालयन्तौ तामुपसर्पतः।  
सोमप्रभा प्रविश्य एतत् पश्यति)
- विमला** — अम्ब! पितः! न मया किमपि अपराद्धं सत्येन शपामि। किमिति यूयं मामेवं पश्यथ? नहि, नहि, न मां ताडयितुमर्हन्ति भवन्तः ...। (उभौ जिघांसया बलाद् विमलां गृहीत्वा प्रघर्षयतः)
- सोमप्रभा** — (भयग्रस्तेनातिमन्दस्वरेण) — अम्ब ... अम्ब ... (श्वश्रूः तामपश्यन्तौ विमलां कर्षतः)
- श्वश्रूः** — नयतु एनां महानसम् इयं तत्रैव ज्वलतु।  
(सोमप्रभा सहसा प्रधावन्ती निष्क्रामति। विमला आत्मत्राणाय सप्राणपणं प्रयतते, नेपथ्ये गीयते)  
क्षणे क्षणे प्रवर्धते धनाय हिंसा खलै-  
र्विलोप्यतेऽतिनिर्दयं च जन्तुभिर्मनुष्यता।  
विभाजितं जगद्धिधा निहन्यते च घातकै-  
रतीव दैन्यमागतास्ति साधुता मनुष्यता।  
(विमलायास्तीव्रश्चीत्कारः। पुरुषनिरीक्षकेण सह सोमप्रभा प्रविशति)
- पुरुषनिरीक्षकः** (उपसृत्य) हे! किं क्रियते, किं प्रचलत्यत्र? मुञ्चत एनाम्।
- श्वश्रूः** — (सम्भ्रमम्) महाभाग! न किमप्यत्याहितम्। इयमस्माकं साध्वी स्नुषा रुग्णा वर्तते। एनामुपचरामः।
- निरीक्षकः** — उपचारः क्रियते! युवयोरुपचारमहं करिष्ये। सर्वमहं जानामि। (सोमप्रभां निर्दिश्य) सर्वं निवेदितमनया बालिकया।  
(श्वश्रूः श्वश्रूश्च विमलां मुञ्चतः)
- विमला** — (सकष्टं सोमप्रभामुपसृत्य) — पुत्रि! त्वम् ... कथं त्वमिह ...
- सोमप्रभा** — अम्ब! मम उपानहौ त्रुटिते, त्रुटितौ, पुस्तकमञ्जूषा च त्रुटितेति अध्यापिका मां कक्षाया निष्कासितवती। त्वया उक्तमासीत् — विद्यालयाद् गृहमेव अविलम्बमागन्तव्यम् अतोऽहं गृहमागता। (रोदिति)
- विमला** — मा रोदीः पुत्रि! सर्वमुपपन्नं भविष्यति।
- सोमप्रभा** — अत्रागत्य मया दृष्टं यत् पितामहः पितामही च त्वां मारयतः। अतोऽहं धावं धावं स्थानकं गता। पुरुष-निरीक्षकाय मया निवेदितम् ...
- विमला** — (सवाष्पं सगद्गदं कण्ठमालिङ्ग्य सोमप्रभाम्) त्वया अहं त्राता। महतः सङ्कटात् त्वं मामुद्धृतवती। प्रियं कृतं त्वया मे।

## शब्दार्थः

चक्षुषी	नेत्रे	दोनों आँखें
मार्जयन्ती	मार्जनं कुर्वन्ती	साफ करती हुई
त्वरस्व	शीघ्रतां कुरु	शीघ्रता करो
परिहीयते	विलम्बो भवति	देर हो रही है
श्वश्रूः		सास
श्वसुरः		श्वसुर
शब्दापयामि	आकारयामि	आवाज देती हूँ/देता हूँ
आक्षपति	आक्षेपं करोति	ताना दे रही है
मर्मघातिभिः	मर्म हन्ति	मर्मभेदी (शब्दों से)
	मर्मघाती तैः मर्मघातिभिः	
साटोपम्	गर्वेण सहितम्	गर्व दिखाती हुई
कोपम्	क्रोधम्	क्रोध को
कदर्थयसि	निन्दयसि	निन्दा करती हो
पणकान्		पैसे
निष्ठीवनम्	थूत्कृतम्	थूकना
यौतकराशिम	कन्याशुल्कम्	दहेज की राशि
नृशंसता	निर्दयता	निर्दयता
लोलुपता	लोभप्रवृत्तिः	लोभ की प्रवृत्ति
त्रोटितानि	भञ्जितानि	तोड़ डाला गया
भाजनानि	पात्राणि	पात्र (बर्तन)
भणितम्	कथितम्	कहा गया
दौरात्म्यम्	दुष्टात्मत्वम्	दुष्टता
सक्रौर्यम्	सनृशंसत्वम्	क्रूरता के साथ
जिघांसया	हन्तुम् इच्छा जिघांसा	मारने की इच्छा से
	तया जिघांसया	
निभालयन्तौ	पश्यन्तौ	देखते हुए (दो)
प्रघर्षयतः	संघट्टयतः	खींचते हैं
कर्षतः	प्रसह्य नयतः	बलपूर्वक ले जाते हैं
महानसम्	पाकशालाम्	रसोई घर में
खलैः	दुष्टैः	दुष्टों द्वारा
मुञ्जत	त्यजत	छोड़ो
अत्याहितम्	अहितम् अकरवम्	अहित किया
स्नुषा	पुत्रवधूः	बहू
रुग्णा	अस्वस्था	बीमार
उपानहौ	पदत्राणे	जूते (दो)
मञ्जूषा	पिटकम्	पेटी (बैग)
उपपन्नम्	उचितम्	सही, ठीक-ठाक

पितामहः	पितृजनकः	दादा
पितामही	पितृजननी	दादी
स्थानकम्	रक्षिस्थानम्	थाना

## 7. प्रत्यभिज्ञानम्

### सारांशः

प्रस्तुत पाठ भासरचित 'पञ्चरात्रम्' नामक नाटक से सम्पादित कर लिया गया है। दुर्योधन आदि कौरव वीरों ने राजा विराट की गायों का अपहरण कर लिया। विराट-पुत्र उत्तर बृहन्नला (छद्मवेषी अर्जुन) को सारथी बनाकर कौरवों से युद्ध करने जाता है। कौरवों की ओर से अभिमन्यु (अर्जुन-पुत्र) भी युद्ध करता है। युद्ध में कौरवों की पराजय होती है। इसी बीच विराट को सूचना मिलती है, वल्लभ (छद्मवेषी भीम) ने रणभूमि में अभिमन्यु को पकड़ लिया है। अभिमन्यु भीम तथा अर्जुन को नहीं पहचान पाता और उनके उग्रतापूर्वक बातचीत करता है। दोनों अभिमन्यु को महाराज विराट के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। अभिमन्यु उन्हें प्रणाम नहीं करता। उसी समय राजकुमार उत्तर वहाँ पहुँचता है जिसके रहस्योद्घाटन से अर्जुन तथा भीम आदि पाण्डवों का छद्मोद्घाटन हो जाता है।

- भटः** — जयतु महाराजः।
- राजा** — अपूर्व इव ते हर्षो ब्रूहि केनासि विस्मितः?
- भटः** — अश्रद्धेयं प्रियं प्राप्तं सौभद्रो ग्रहणं गतः॥
- राजा** — कथमिदानीं ग्रहीतः?
- भटः** — रथमासाद्य निश्शङ्क बाहुभ्यामवतारितः। (प्रकाशम्) इत इतः कुमारः।
- अभिमन्युः** — भोः को नु खल्वेषः? येन भुजैकनियन्त्रितो बलाधिकेनापि न पीडितः अस्मि।
- बृहन्नला** — इत इतः कुमारः।
- अभिमन्युः** — अये! अयमपरः कः विभात्युमावेषमिवाश्रितो हरः।
- बृहन्नला** — आर्य, अभिभाषणकौतूहलं मे महत्। वाचालयत्वेनमार्यः।
- भीमसेनः** — (अपवार्य) बाढम् (प्रकाशम्) अभिमन्यो!
- अभिमन्यु** — अभिमन्युर्नाम?
- भीमसेनः** — रुष्यत्येष मया त्वमेवैनमभिभाषय।
- बृहन्नला** — अभिमन्यो!
- अभिमन्युः** — कथं कथम्। अभिमन्युर्नामाहम्। भोः! किमत्र विराटनगरे क्षत्रियवंशोद्भूताः नीचैः अपि नामभिः अभिभाष्यन्ते अथवा अहं शत्रुवशं गतः। अतएव तिरस्क्रियते।
- बृहन्नला** — अभिमन्यो! सुखमास्ते ते जननी?
- अभिमन्युः** — कथं कथम्? जननी नाम? किं भवान् मे पिता अथवा पितृव्यः? कथं मां पितृवदाक्रम्य स्त्रीगतां कथां पृच्छसे?
- बृहन्नला** — अभिमन्यो! अपि कुशली देवकीपुत्रः केशवः?
- अभिमन्युः** — कथं कथम्? तत्रभवन्तमपि नाम्ना। अथ किम् अथ किम्? (उभौ परस्परमवलोकयतः)
- अभिमन्यु** — कथमिदानीं सावज्ञमिव मां हस्यते?
- बृहन्नला** — न खलु किञ्चित्।  
पार्थ पितरमुद्दिश्य मातुलं च जनार्दनम्।  
तरुणस्य कृतास्त्रस्य युक्तो युद्धपराजयः॥
- अभिमन्युः** — अलं स्वच्छन्दप्रलापेन! अस्माकं कुलो आत्मस्तवं कर्तुमनुचितम्। रणभूमौ हतेषु शरान् पश्य, मदृते अन्यत् नाम न भविष्यति।
- बृहन्नला** — एवं वाक्यशौण्डीर्यम्। किमर्थं तेन पदातिना गृहीतः?
- अभिमन्युः** — अशस्त्रं मामभिगतः। पितरम् अर्जुनं समरन् अहं कथं हन्याम्। अशस्त्रेषु मादृशाः न प्रहरन्ति। अतः अशस्त्रोऽयं मां वञ्चयित्वा गृहीतवान्।

- राजा — त्वर्यतां त्वर्यतामभिमन्युः।
- बृहन्नला — इत इतः कुमारः। एष महाराजः। उपसर्पतु कुमारः।
- अभिमन्युः — आः। कस्य महाराजः?
- राजा — एह्येहि पुत्र! कथं न मामभिवादयसि? (आत्मगतम्) अहो! उत्सिक्तः खल्वयं क्षत्रियकुमारः। अहमस्य दर्पशमनं करोमि। (प्रकाशम्) अथ केनायं गृहीतः
- भीमसेनः — महाराज! मया।
- अभिमन्युः — अशस्त्रेणेत्यभिधीयताम्।
- भीमसेन — शान्तं पापम्। धनुस्त दुर्बलैः एव गृह्यते। मम तु भुजौ एव प्रहरणम्।
- अभिमन्युः — मां तावद् भोः! किं भावन् मध्यमः तातः यः तस्य सदृशं वचः वदति।
- भगवान् — पुत्र! कोऽयं मध्यमो नाम?
- अभिमन्युः — योक्त्रयित्वा जरासन्धं कण्ठशिलष्टेन बाहुना।  
असह्यं कर्म तत् कृत्वा नीतः कृष्णोऽतदर्हताम्॥
- राजा — न ते क्षेपेण रुष्यामि, रुष्यता भवता रमे।  
किमुक्त्वा नापराद्धोऽहं, कथं तिष्ठति यात्विति॥
- अभिमन्युः — यद्यहमनुग्राह्यः  
पादयोः समुदाचार क्रियतां निग्रहोचितः।  
बाहुभयामाहतं भीमः बाहुभ्यामेव नेष्यति॥  
(ततः प्रविशत्युत्तरः)
- उत्तर — तात! अभिवादये!
- राजा — आयुष्मान् भव पुत्र। पूजिताः कृतकर्माणो योधपुरुषाः।
- उत्तर — पूज्यतमस्य क्रियता पूजा।
- राजा — पुत्र! कस्मै?
- उत्तर — इहात्रभवते धनञ्जयाय।
- राजा — कथां धनञ्जयायेति?
- उत्तर — अथ किम् श्मशानाद्धनुरादाय तूणीराक्षयसायके।  
नृपा भीष्मादयो भग्ना वयं च परिरक्षिताः॥
- राजा — एवमेतत्।
- उत्तर — व्यपनयतु भवाञ्छङ्काम्। अयमेव अस्ति धनुर्धरः धनञ्जयः।
- बृहन्नला — यद्यहं अर्जुनः तर्हि अयं भीमसेनः अयं च राजा युधिष्ठिरः।
- अभिमन्युः — इहात्रभवन्तो मे पितरः। तेन खलु ....  
न रुष्यन्ति मया क्षिप्ता हसन्तश्च क्षिपन्ति माम्।  
दिष्ट्या गोग्रहणं स्वन्तं पितरो येन दर्शिताः॥  
(इति क्रमेण सर्वान् प्रणमति, सर्वे च तम् आलिङ्गन्ति।)

### शब्दार्थः

प्रत्यभिज्ञानम्	पुनः ज्ञानम्, संस्कार-जन्यं ज्ञानम्, पुनः स्मृतिः	पहचान
अपूर्वः	अविद्यमान् पूर्वः	जो पहले न हुआ हो
अश्रद्धेयम्	न श्रद्धेयम्	श्रद्धा के अयोग्य
सौभद्रः	सुभद्रायाः पुत्रः, अभिमन्युः	अभिमन्यु

आसाद्य	प्राप्त	पाकर, पहुँचकर
निशङ्कम्	शङ्क्या रहितम्	बिना किसी हिचक के
भुजैकनियन्त्रितः	एकेन एव बाहुना संयतः	एक ही हाथ से पकड़ा गया
विभाति	शोभते	सुशोभित होता है
कौतूहलम्	जिज्ञासा	जानने की उत्कण्ठा
अपवार्य	दूरीकृत्य	हटाकर
रुष्यति	क्रुद्धः भवति	क्रोधित होता है
वाचालयतु	वक्तुं प्रेरयतु	बोलने को प्रेरित करें
तिरस्क्रियते	उपेक्ष्यते	उपेक्षा की जाती है
पितृव्यः	पितुः भ्राता	चाचा
अवलोकयतः	पश्यतः	देखते हैं (द्विवचन)
सावज्ञम्	अपमानेन सहितम्	उपेक्षा करते हुए
वाक्शौण्डीर्यम्	वाचिकं वीरत्वम्	वाणी की वीरता
पदातिः	पादाभ्याम् अतति	पैदल चलने वाला
उपसर्पतु	समीपं गच्छतु	पास जाओ
एहि	आगच्छ	आओ
उत्सिक्तः	गर्वोद्धतः, अहङ्कारी	गर्व से युक्त
दर्प-प्रशमनम्	गर्वस्य शमनम्	घमंड को शान्त करना
गृहीतः	ग्रहणे कृतः	पकड़ा गया
प्रहरणम्	शस्त्रम्	हथियार
योक्त्रयित्वा	बद्ध्वा	बाँधकर
क्षेपेण	निन्दावचनेन	निन्दा से
रमे (√ रम्)	प्रीतो भवामि	प्रसन्न होता हूँ
यातु	गच्छतु	जाओ
समुदाचारः	शिष्टाचारः	सभ्य आचरण
अनुग्राह्यः	अनुग्रहस्य योग्यम्	कृपा के योग्य
निग्रहोचितम्	बन्धनोचित	उचित दण्ड
तूणीर	बाणकोशः	तरकस
व्यपनयतु	दूरीकरोतु	दूर करें
क्षिप्ताः	व्यङ्ग्येन सम्बोधिताः	आक्षेप किये जाने पर
दिष्ट्या	भाग्येन	भाग्य से
गोग्रहणम्	धेनूनाम् अपहरणम्	गायों का अपहरण
स्वन्तम् (सू. अन्तम्)	सुखान्तम्	सुखान्त

□□

## 9. सिकतासेतुः

### सारांशः

प्रस्तुत नाट्यांश सोमदेवरचित कथासरित्सागर के सप्तम लम्बक (अध्याय) पर आधारित है। यहाँ तपोबल से विद्या पाने के लिए प्रयत्नशील तपोदत्त नामक एक बालक की कथा का वर्णन है। उसके समुचित मार्गदर्शन के लिए वेष बदलकर इंद्र उसके पास आते हैं



और पास ही गंगा में बालू से सेतुनिर्माण के कार्य में लग जाते हैं। उन्हें वैसा करते देख तपोदत्त उनका उपहास करता हुआ कहता है-‘अरे! किसलिए गंगा के जल में व्यर्थ ही बालू से पुल बनाने का प्रयत्न कर रहे हो?’ इंद्र उसे उत्तर देते हैं-यदि पढ़ने, सुनने और अक्षरों की लिपि के अभ्यास के बिना तुम विद्या पा सकते हो तो बालू से पुल बनाना भी सम्भव है। इंद्र के अभिप्राय को जानकर तपोदत्त तपस्या करना छोड़कर गुरुजनों के मार्गदर्शन में विद्या का ठीक-ठीक अभ्यास करने के लिए गुरुकुल चला जाता है।

(ततः प्रविशति तपस्यारतः तपोदत्तः)

**तपोदत्तः** — अहमस्मि तपोदत्तः। बाल्ये पितृचरणैः क्लेश्यमानोऽपि विद्यां नाऽधीतवानस्मि।

तस्मात् सर्वैः, कुटुम्बिभिः मित्रैः ज्ञातिजनैश्च गर्हितोऽभवम्।

(ऊर्ध्वं निःश्वस्य)

हा विधे! किमिदम्मया कृतम्? कीदृशी दुर्बुद्धिरासीत्तदा! एतदपि न चिन्तितं यत्-  
परिधानेरलङ्कारैर्भूषितोऽपि न शोभते।

नरो निर्माणभोगीव सभायां यदि वा गृहे।। 1।।

(किञ्चिद् विमृश्य)

भवतु, किमेतेन? दिवसे मार्गभ्रान्तः सन्ध्यां यावद् यदि गृहमुपैति तदपि वरम्।

नाऽसौ भ्रान्तो मन्यते। एष इदानीं तपश्चर्यया विद्यामवाप्तुं प्रवृत्तोऽस्मि।

(जलोच्छलनध्वनिः श्रूयते)

अये कुतोऽयं कल्लोलोच्छलनध्वनिः? महामत्स्यो मकरो वा भवेत्। पश्यामि तावत्।

(पुरुषमेकं सिकताभिः सेतुनिर्माण-प्रयासं कुर्वाणं दृष्ट्वा सहासम्)

हन्त! नास्त्यभावो जगति मूर्खानाम्! तीव्रप्रवाहायां नद्यां मूढोऽयं सिकताभिः सेतुं निर्मातुं प्रयतते!

(साट्टहासं पार्श्वमुपेत्य)

भो महाशय! किमिदं विधीयते! अलमलं तव श्रमेण। पश्य,

रामो बबन्ध यं सेतुं शिलाभिर्मकरालये।

विदधद् बालुकाभिस्तं यासि त्वमतिरामताम्।। 2।।

चिन्तत तावत्। सिकताभिः क्वचित्सेतुः कर्तुं युज्यते?

**पुरुषः** — भोस्तपस्विन्! कथं मामुपरुणात्सि। प्रयत्नेन किं न सिद्धं भवति? कावश्यकता शिलानाम्? सिकताभिरेव सेतुं करिष्यामि स्वसंकल्पदृढतया।

**तपोदत्तः** — आश्चर्यम्! सिकताभिरेव सेतुं करिष्यसि? सिकता जलप्रवाहे स्थास्यन्ति किम्? भवता चिन्तितं न वा?

**पुरुषः** — (सोत्प्रासम्) चिन्तितं चिन्तितम्। सम्यक् चिन्तितम्। नाहं सोपानमार्गैरट्टमधिरोढुं विश्वसिमि। समुत्प्लुत्यैव गन्तुं क्षमोऽस्मि।

**तपोदत्तः** — (सव्यङ्ग्यम्)

साधु साधु! आज्ञनेयमप्यतिक्रामसि!

**पुरुषः** — (सविमर्शम्)

कोऽत्र सन्देहः? किञ्ज,

बिना लिप्यक्षरज्ञानं तपोभिरेव केवलम्।

यदि विद्या वशे स्युस्ते, सेतुरेष तथा मम।। 3।।

**तपोदत्तः** — (सवैलक्ष्यम् आत्मगतम्)

अये! मामेवोद्दिश्य भद्रपुरुषोऽयम् अधिक्षिपति! नूनं सत्यमत्र पश्यामि। अक्षरज्ञानं विनैव वैदुष्यमवाप्तुम् अभिलषामि!

तदियं भगवत्याः शारदया अवमानना। गुरुगृहं गत्वैव विद्याभ्यासो मया करणीयः। पुरुषार्थैरेव लक्ष्यं प्राप्यते।

(प्रकाशम्)



भो नरोत्तम ! नाऽहं जाने यत् कोऽस्ति भवान् । परन्तु भवद्भिः उन्मीलितं मे नयनयुगलम् । तपोमात्रेण विद्यामवाप्तुं प्रयतमानोऽहमपि सिकताभिरेव सेतुनिर्माणप्रयासं करोमि । तदिदानीं विद्याध्ययनाय गुरुकुलमेव गच्छामि ।  
( सप्रणामं गच्छति )

## शब्दार्थः

सिकता	बालुका	रेत
सेतुः	जलबन्धः	पुल
तपस्यारतः	तपः कुर्वन्	तपस्या में लीन
पितृचरणैः	तातपादैः	पिताजी के द्वारा
क्लेश्यमानः	संताप्यमानः	व्याकुल किया जाता हुआ
अधीतवान्	अध्ययनं कृतवान्	पढ़ा
कुटुम्बिभिः	परिवारजनैः	कुटुम्बियों द्वारा
ज्ञातिजनैः	बन्धुबान्धवैः	बन्धु-बान्धवों द्वारा
गर्हितः	निन्दितः	अपमानित
निःश्वस्य	दीर्घश्वासं गृहीत्वा	लम्बी साँस लेकर
दुर्बुद्धिः	दुर्मतिः	दुष्ट बुद्धिवाला
परिधानैः	वस्त्रैः	कपड़ों से, पहनावों से
मार्गभ्रान्तः	पथभ्रष्टः	राह से भटका हुआ
उपैति	प्राप्नोति, समीपं गच्छति	जाता है, समीप जाता है
तपश्चर्यया	तपसा	तपस्या के द्वारा
जलोच्छलनध्वनिः	जलोर्ध्वगतेः शब्दः	पानी के उछलने की आवाज
कल्लोलोच्छलनध्वनिः	तरङ्गोच्छलनस्य शब्दः	तरंगों के उछलने की ध्वनि
कुर्वाणम्	कुर्वन्तम्	करते हुए
सहासम्	हासपूर्वकम्	हँसते हुए
सोत्प्रासम्	उपहासपूर्वकम्	खिल्ली उड़ाते हुए, चुटकी लेते हुए
साट्टहासम्	अट्टहासपूर्वकम्	जोर से हँसकर
अट्टम्	अट्टालिकाम्	अटारी को
अधिरोढुम्	उपरि गन्तुम्	चढ़ने के लिए
उपरुणत्सि	अवरोधं करोषि	रोकते हो
आञ्जनेयम्	हनुमन्तम्	अञ्जनिपुत्र हनुमान् को
सविमर्शम्	विचारसहितम्	सोच-विचार कर
सवैलक्ष्यम्	सलज्जम्	लज्जापूर्वक
वैदुष्यम्	पाण्डित्यम्	विद्वत्ता
उन्मीलितम्	उद्घाटितम्	खोल दी

## 12. वाङ्मनः प्राणस्वरूपम्

(केवलं पठनार्थं वर्तते)

## सारांशः

प्रस्तुत पाठ छान्दोग्योपनिषद् के छठे अध्याय के पञ्चम खण्ड पर आधारित है। इसमें मन, प्राण तथा वाक् (वाणी) के सन्दर्भ में रोचक विवरण प्रस्तुत किया गया है। उपनिषद् के गूढ़ प्रसंग को बोधगम्य बनाने के उद्देश्य से इसे आरुणि एवं श्वेतकेतु के संवादरूप में प्रस्तुत किया गया है। आर्ष-परम्परा में ज्ञान-प्राप्ति के तीन उपाय बताए गए हैं जिनमें परिप्रश्न भी एक है। यहाँ गुरुसेवापरायण शिष्य वाणी, मन तथा प्राण के विषय में प्रश्न पूछता है और आचार्य उन प्रश्नों के उत्तर देते हैं।

श्वेतकेतुः — भगवन्! श्वेतकेतुरहं वन्दे।

आरुणिः — वत्स! चिरञ्जीव।

श्वेतकेतुः — भगवन्! किञ्चित्प्रष्टुमिच्छामि।

आरुणिः — वत्स! किमद्य त्वया प्रष्टव्यमस्ति?

श्वेतकेतुः — भगवन्! प्रष्टुमिच्छामि किमिदं मनः?

आरुणिः — वत्स! अशितस्यान्नस्य योऽणिष्ठः तन्मनः।

श्वेतकेतुः — कश्च प्राणः?

आरुणिः — पीतानाम् अपां योऽणिष्ठः स प्राणः।

श्वेतकेतुः — भगवन्! भगवन्! केयं वाक्?

आरुणिः — वत्स! अशितस्य तेजसा योऽणिष्ठः सा वाक्। सौम्य! मनः अन्नमयं, प्राणः आपोमयः वाक् च तेजोमयी भवति इत्यप्यवधार्यम्।

श्वेतकेतुः — भगवन्! भूय एव मां विज्ञापयतु।

आरुणिः — सौम्य! सावधानं शृणु। मथ्यमानस्य दध्नः योऽणिमा, स ऊर्ध्वः समुदीषति। तत्सर्पिः भवति।

श्वेतकेतुः — भगवन्! व्याख्यातं भवता घृतोत्पत्तिरहस्यम्। भूयोऽपि श्रोतुमिच्छामि।

आरुणिः — एवमेव सौम्य! अशयमानस्य अन्नस्य योऽणिमा, स ऊर्ध्वः समुदीषति। तन्मनो भवति। अवगतं न वा?

श्वेतकेतुः — सम्यगवगतं भगवन्!

आरुणिः — वत्स! पीयमानानाम् अपां योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति स एव प्राणो भवति

श्वेतकेतुः — सौम्य! अशयमानस्य तेजसो योऽणिमा, स ऊर्ध्वः समुदीषति। सा खलु वाग्भवति। वत्स! उपदेशान्ते भूयोऽपि त्वां विज्ञापयितुमिच्छामि यदन्नमयं भवति मनः, आपोमयो भवति प्राणस्तेजोमयी च भवति वागिति। किञ्च यादृशमन्नादिकं गृह्णाति मानवस्तादृशमेव तस्य चित्तादिकं भवतीति मनुपदेशसारः। वत्स! एतत्सर्वं हृदयेन अवधारय।

श्वेतकेतुः — यदाज्ञापयति भगवन्। एष प्रणमामि।

आरुणिः — वत्स! चिरञ्जीव। तेजस्वि नौ अधीतम् अस्तु।

## शब्दार्थाः

प्रष्टुम्	प्रश्नं कर्तुम्	प्रश्न करने/पूछने के लिए
प्रष्टव्यम्	प्रष्टुं योग्यम्	पूछने योग्य
अशितस्य	भक्षितस्य	खाये हुए का
अणिष्ठः	लघिष्ठः लघुतमः	अत्यन्त लघु अथवा सर्वाधिक लघु
अन्नमयम्	अन्नविकारभूतम्	अन्न से निर्मित
आपोमयः	जलमयः	जल में परिणत
तेजोमयः	अग्निमयः	अग्नि का परिणामभूत
अवधार्यम्	अवगन्तव्यम्	समझने योग्य
विज्ञापयतु	प्रबोधयतु	समझाइये

भूयोऽपि	पुनरपि	एक बार और
समुदीषति	समुत्तिष्ठति, समुद्घाति, समुच्छलति	ऊपर उठता है
सर्पिः	घृतम्, आज्यम्	घी
अश्मयमानस्य	भक्ष्यमाणस्य, निगीर्यमाणस्य	खाये जाते हुए का
उपदेशान्ते	प्रवचनान्ते	व्याख्यान के अन्त में
तेजस्वि	तेजोयुक्तम्	तेजस्विता से युक्त
नौ अधीतम्	आवयोःपठितम्	हम दोनों द्वारा पढ़ा हुआ

□□

